

प्रकाशक के दो शब्द

जैन मित्र मंडल धर्मपुरा देहली गत इकीस वर्ष से देहली में स्थापित है और जैन ममाच व जैन धर्म की हर प्रकार से मंडल सेवा कर रहा है। इसका उद्घवल कार्य जनता को भली प्रकार डान है। जैन धर्म का प्रचार करना इसकी मुख्य उद्देश्य है मंडल की वर्ष से इस समय तक १०४ टौट प्रकाशित हो चुके हैं जिनकी प्रकाशित सेवा लगभग तीव्र लाल के करीब हुआ च गई है टौटों की मांग भारतवर्ष के मित्रमित्र देशोंसे आनी रहती है। टौटों की समालोचना जैन अजीन पत्रों में बराबर होती रहती है। अतः प्रार्थना है कि जिन महानुभावों को धर्म से प्रेम है और जैन धर्म का बोध प्राप्त करना चाहते हैं वह स्वयं इसके समासद वर्ते और अपने मित्रों की समासद बना कर मंडल के कार्य कर्त्ताओं की उत्साह अनुप्राप्त करें मंडल ने जैनधर्म प्रचार के लिये "श्री चद्गवान पवित्र क लायवरेली" स्थापित कर रखी है। फीम संभासदी मित्र गैडज ३। व श्री चद्गवान पवित्र क लायप्रेरी की २) सालाना है प्रकाशित टौट समासदों को सुन्न दिये जाते हैं मंडल के जो टौट समाप्त हो चुके हैं उनका छपना बहुत ही लाल है उनके छपवाने में पनकी सहायता देनो चाहिये जिसकी सूचि इस टौट के आधीर में भी जूर है। धर्म के प्रेमियों से निवेदन है कि टौट मेंगाकर जैन अजीन जनता में सुन्न बाट कर जैन धर्म का प्रचार करें और दुनियों को दिखाएं कि जैनधर्म में क्या है जीदर है।

मैं धीमान जैनधर्म भूमण्डल शीर्णलरसाद जी का अस्त्वन आभारी हूँ जिन्हें यह सुन्दर और लाभ दायक टौट लियक कर्म प्रदान किया है मैं आशा करना हूँ कि आगामी में भी अमां जी उत्तम र टौट लियकर मंडल को भेजते रहेंगे।

भवदीय—

मन्दी जैन मित्रमण्डल, धर्मपुरा देहली।

आत्मोन्नति या सुदृढ़ की तरक्की



हर एक मनुष्य का पार्वत है कि वह उन्नति के रास्ते पर चले। मानव का जीवन घटुत कीमती है। मानव सबसे बड़ा प्राणी है। तरक्की की आखोरी हृदयक यह पहुँच सकता है। इसलिए हर एक मनुष्य को उचित है कि वह अपने जीवन के समय को सफल करें। उसे विलकुल वरदाव न करे। आत्मोन्नति या अपनी तरक्की करना। इसका परम पूर्त्य है? इसे आलसी, कायर होकर भाग्य के आधीन नहीं बैठे रहना चाहिये। हमेशा उरुपार्थी रहकर दूसरे संसार में अपने को ऊपर उठाना चाहिये। आत्मोन्नति के सम्बन्ध में दो अपेक्षाओं से विचार करना है—एक व्यवहार की दृष्टि से दूसरे परमार्थ की दृष्टि से, व्यवहार दृष्टि से दूर एक मानव दो शारीरिक, औद्योगिक, समाजिक, राजनीतिक व अन्य उचित लौकिक उन्नति करनी चाहिये। परमार्थ की दृष्टि से उसे अपने आत्मा को पूर्ण, शुद्ध, स्वतन्त्र व परम-सुखी घनाना चाहिये। इन दोनों ही प्रकार की उन्नति के रास्ते पर वही अपने को चला सकता है, जिसमें योग्यता हा, लियाकत हो। इसलिए यह पहले मुनासिद्ध है कि हर एक मनुष्य खाहे खी ही या पुरुप अपने को असली मनुष्य बतावे। जन्म से कोई मनुष्य मनुष्य नहीं बन सकता। मनुष्य में मनुष्य बनने की शक्ति रहती है, जब उस शक्ति को शिक्षा (Education) के द्वारा संस्कारित किया जायगा तब ही मनुष्य, मनुष्य बनेगा।

यिना शिक्षा के शक्तियें प्रफुल्लित नहीं हो सकती। जैसे माणक व पन्ने की खान से निकला हुआ सुरखुरा पत्थर (rough stone)

वरने में मार्गदर व कनै के रक्ष एवं ऐ शमिल होता है । परन्तु दहर दहर यह ही बनता, जब उनको फ्रांट छांट एवं "विस्कर" परिचय दाँड़ रुक्क दिया जाता । यदि साह नहीं किया जायगा तो वह एवं एवं समाज इच्छा वहा रहेगा, उभरी प्रसिद्धि नहीं होता । शुद्ध राजा-न्युनियों के आभूषणों में जड़कर शोभा नहीं दबता, इनी हमारे हर दफ्त वालक व वालियों में चाहे वह विसी भी हो रही भी वह यह दिमी भी स्थिति रखा हो, ज़ज़ली हो या लागौरेट हो, नीच हो या ऊँच हो, दुर्ल रत्न व श्रीरत्न बनने की शक्ति है । यित्ता है नेराहर से हाथ व पुत्र रत्न व ग्रीष्म बनने की शक्ति है । इसी क्षिति नेराहरों ने इहा है—“विशाशिरीनः पशु” “विशा विद्वाः गः मनुष्य स्वर्णेण शून्यशर्वन्तु” यह विशा के विना मनुष्य के भूत में पशु विपर रहे हैं । यह वाम परिव्रक्त होत्य है । इ देश का हर एवं लहौरा-ज़हरी रिहित हो रही, यह परिव्रक्त होत्य मात्रा वित्त का है कि वे वालक-वालियों को दिल्ली देखें, याद वे शिला नहीं दे सकते हैं, तो बनाए रुखिन हैं कि वालक वालियों को जन्म हो ज देखें, इस गिरा के लाज ये दूरी न महसू देना मनोभ के लोगों का तथा रक्षण बरने का भी दृहमत वह करनेवा है ।

रामन बांग भगा हो वह इसी लिए यमूल बरते हैं कि वे अपने भर में रहु एवं माय व द्रव्या का गुरुरालित, रथभाष्य दुक व दर भरह मृती करायें ।

गारे ही सत्य वहू भाने वाले देशों ने अपनी व सर्व दज्जा को गिरिजा बना दिया है, विट्ठल, जमेन, प्रत्यंम, शुनेयार्द, अमेरिदा, शार्गाम, तुहं व अमा से रक्ष यों देती हैं । इन्हें १० घण्टे में यमूल एवं माय गिरा तो द्रव्या वर दिया है, और है विट्ठल मारवार को यमूल वर गाय बरते हुए बताए २०० घण्टे हो जुके

हैं। परन्तु अभी तक भारत १०० में ६२ प्रैसे 'खो-मुरुप' हैं, जो अहरों का लिखना-पढ़ना तक नहीं जानते हैं। जहाँ के 'मनुष्य' इतने अधिक पशु तुल्य हों, वहाँ परं उन्नति के से हो सकती है। सरकार का पवित्र कर्त्तव्य है कि और मद्दों से खर्च पटाकर शिक्षा के लिए इतना रुपया तो दे, जिससे प्राथमिक शिक्षा (Primary education) को हर एक बालक-बालिका मुक्त व अनिवार्य हर से (free and compulsory) ले सके। सरकार का खर्च सेना विभाग में व प्रवन्ध विभाग में इतना भारी है कि उसे शिक्षा प्रेसे उपयोगी काम के लिए बचत नहीं होती है, जब तक राज्य नीति का ढंग ऐसा न बदले जिससे सेना व रक्षा व प्रवन्ध विभाग में इतना कम खर्च हो कि शिक्षा के लिए दृव्य यथा आवश्यक निल सके, तब तक सरकार से इस आशा की पूर्ति होना असम्भव दीखती है। तब क्या हमें शिक्षा प्रचार के लिए कुछ और उद्योग न करना चाहिये?

हमें अपने पेरों लड़े होकर हर एक बालक-बालिका को कम से कम इतनी शिक्षा तो अख्य देना चाहिये, जिससे वह एक भाषा के गद्य या पश्च साहित्य को पढ़कर अपने भावों को सुचार तके तथा मामूली हिसाब, किताब, आमद खर्च का रखा सके।

भारतीय उत्थान के लिए किसी एक भाषा व लिपि का ज्ञान सबको होना आवश्यक है। हिन्दी भाषा व देवनागरी लिपि अधिक मानवों से व्यवहार की जाती है। इसलिए इस भाषा का डोक २ ज्ञान तो हर एक को देना योग्य है, जब प्रजा प्राथमिक शिक्षा में निपुण हो जाय। तब उन्नतिकारक विचारों को ज्ञान वाली पुस्तकें पढ़ने को दी जावें। इसी दराय से सारी प्रजा के विचार उन्नति के मार्ग पर उत्साहित हो जायेंगे। जिन भारतीय ग्रामों की मातृ-भाषा हिन्दी 'नहीं' है, गुजराती, मराठी, नंदोया,

दीर्घकाल, कनडो, तामील आदि हैं उन प्रान्तों के बालक व यालिकाओं को इन भाषाओं का प्राथमिक शिक्षा के साथ २ दिनदी भाषा की भी प्राथमिक शिक्षा देना चाहिये है, जिससे एक राष्ट्रीयता व एकी भावभना भारत में उत्पन्न हो सके। इस शिक्षा के प्रयत्न के लिए प्रजा को स्वयं सहें होना चाहिये ।

जो पेन्शन पाकर व अन्य तरह से अपने काम काज को पुनरादि को सौंप सकते हैं उनको अपना आन्तिम जीवन का समय परोपकार्य विताना चाहिये । विना किसी वेवन के शिक्षा प्रदान का काम करना चचित है । अन्य शिक्षा सम्बन्धी कार्य के लिये यह उचित है कि इरपक जाति वाले अपना द्रव्य विवाहादि व जन्म मरण के सरधों से बचाकर विद्या प्रचार के कार्य में अपेणु करें । सर्व प्रकार के भेले व तमाशों को १० घर्प के लिए घन्द कर दें । आभूषणों में व कीमती वस्त्रों में भी द्रव्य को अविक न रोकें । सब तरफ से यथा सम्भव द्रव्य को बचाकर शिक्षा प्रचारार्थ अपेणु करें । तथा जातियों में ऐसा नियम हो जावे कि अनपढ़ कन्या व पुत्र का विवाह न होगा । इस योजना को क्याम में लेने से शोब्र ही भारत में प्रारम्भिक शिक्षा फैल सकती है । लिखना पढ़ना जानना बासनव में शिक्षा नहीं है । यह शिक्षा लेने का साधन है । शिक्षा कुछ और ही नहु दै । जिन शक्तियों से एक मानव जना है जो जी शक्तियें एक मानव में पाई जाती हैं उन शक्तियों को लेकरके उत्तरवल करना, उनको महत्वशाली बनाना

अधिक उपयोगी है। शारीरिक शक्ति वह है जिसके आधार से हम जीवित रहकर अन्य शक्तियों का उपयोग ले सकते हैं। शारीर माद्य खलु धर्म साधनं—इसीलिए कहा है कि शरीर की पहले स्वास्थ्य युक्त होने की बहुत है क्योंकि धर्म फर्म का सब साधन शरीर की सन्दुरुस्ती से हो सकता है। एक तन्दुरुस्ती हजार न्यामर तकी भी शरीर शक्ति से जब हम दो चार की रक्षा कर सकते हैं तब वाचिक शक्ति से उपदेश देकर हजारों को सुमारा पर चला सकते हैं इसकिये शारीरिक शक्ति से वाचिक शक्ति का भूल्य अधिक है। मानसिक शक्ति से हम जगत हितकारी ऐसी सम्मति दिचार सकते हैं जिससे जगतमात्र का हित हो सकता है। इससे यह शक्ति वाचिक शक्ति से भी अधिक काम की है। आत्मिक शक्ति की महिमा अपार है। इस शक्तिका फल तीनों शक्तियों के काम में प्रेरक है, इतना ही नहीं इस से आश्चर्य कारक काम किये जा सकते हैं। योग थल से एक योगी हुए भाव में हजारों मील पहुँच सकता है। जल में थल के समान चल सकता है। सबसे अधिक बड़िया काम जो आत्मथल से होता है वह यह है कि आत्मा शुद्ध होकर परमात्मा पद में पहुँच सकता है। आत्मथल का नियेष नहीं किया जा सकता। जीवित य शृतक में यही अन्तर है। कि जीवित के शरीर में आत्मा है जबकि शृतक के शरीर में नहीं है। आत्मा की सत्ता विना शरीर, वचन, मन कुछ काम नहीं कर सकते। ज्ञान शक्ति Consciousness एक ऐसा गुण है जो जड़ में नहीं है, जिसमें यह गुण होता है उसे ही आत्मा कहते हैं। अतिरिक्त जानातिरिक्त आत्मा—जब जड़ वग्नुओं में समझ नहीं है यह बात प्रत्यक्ष प्रगट है तब उन से चेतना शक्ति कभी पैदा नहीं हो सकती है। हमारे सामने कुरसी, टेबुल, कपड़ा कागज पढ़ा है ये जड़ हैं। इनमें संमझ नहीं है। यह न्याय शाखा

पीने से पेसा भी छार्च होता है । शरीर को भी द्वानि होती है । कुदरती पानी पहला हुआ ध्यान कर पीने से पेसा भी बढ़ता है । शरीर को भी लाज होता है ।

भोजन इमें खही करना चाहिये जो प्राकृतिक Natural हो जो शरीर की सन्दुरस्ती के लिये आवश्यक हो, जबान की लोटु-पता वश द्वानिकारक भोजन नहीं प्रहला करना चाहिये । इमें कभी कोई भी मादक पदार्थ या नशा नहीं लेना चाहिये, शराब तो बहुत गन्दी चीज है इस में तो करोड़ों कीड़े मरते हैं ए इसका नशा पागल बना देता है इसे तो कभी छूना तक न चाहिये, इसके सिवाय चरस, गांजा, तम्बाकू, भांग को भी कभी नहीं पीना चाहिये । जिन्हे नशे हैं सब शरीर को बिगाड़ते हैं । उत्तोनित करके कमज़ोर बनाते हैं । लिखा है—

मर्यादा भोजने मोहित चित्तस्मु विस्मरति घर्मः ।

विस्मृत घर्मा जीथो हिमाम दिशांक माचरति ॥

भावार्थ—मादक पदार्थ मन को मोहित कर देता है मोहित चित्त अवश्य घर्म को भूल जाता है घर्म को भूलकर प्रानी विना भय के हिसाके काम करने लग जाता है मन में घुरे दिचार लाता है मुँह से गली गली ज ए अपशाद्द बहता है शरीर से कुचेष्टा करने लग जाता है । कभी पुत्रों को भी खोयते

स्वयं नहीं भोगते हैं यदी हमारी मुराक है हम को इन को साहर
 तन्दुरस्त रहना चाहिये, मांस हमारी मुराक नहीं है वह अप्राकृतिक
 un natural है एक बच्चे के सामने मौस की छली ढाल दी जावे
 वह एक फल ढाल दिया जावे तो वह घब्बा फल को उठालेगा—
 मांस को नहीं—प्रकृति शाक फलादि अन्न चाहती है। मांस
 खाने की आदत बना ली जाती है, हमें मांस के खाने की विलक्षण
 भी जहरत नहीं है। मांस से अनेक रोग भी पैदा हो जाते हैं—
 हम माता के दूध के समान गाय भैंस के दूध को वह दूध से बने धी
 दही आदि को भी खा सकते हैं, हमने एक दफे कलकत्ते के एक
 बड़े मेडिकल डाक्टर से पूछा कि दुनियां में सबसे बढ़िया मानव
 की मुराक क्या हो सकती है तो उसने जवाब दिया कि fresh
 pure cow milk ताजा पवित्र गायका दूध इसीलिये हमें अचित है
 कि हम गायों को वह भैंसों को पालें व उनके बच्चों को कष्ट न देते हुए
 उनसे दूध लेकर भरें, जब तक वह घास खाने लायक न हों
 तब तक उनको काफी दूध पी लेने हैं दमो पूर्वक दूध देने वाले
 जानवरों की रक्ता करके हमें उनसे दूध लेना योग्य है। जितने काम
 वाले जानवर हैं उनकी मुराक मांस नहीं है दूध व शाक फलादि
 है। अपने सामने ऊंट, घोड़े, हाथी, वैल, खजर घड़े २ परिश्रम
 के काम करते दिखाई पड़ते हैं ये कोई स्वभाव से मांस नहीं
 खाते हैं। आदमी भी काम वाला जन्मता है इसे भी मांस न खाना
 चाहिये जब हमको प्रकृति में अन्न फल शाक दूध मिलते हैं तब हम
 बृथा क्यों मांस खाकर पशुओं के धध के भागी हों, मांसाहार के
 कारण ही कसाई खानों में बड़ी निर्दियता से दूध देने वाले गाय
 भैंसादि को वह अन्य निरपराध जानवरों को धध किया जाता है।
 यदि कोई आंख से देखले तो वह अवश्य मांस खाना छोड़दें।
 मौसाहार करना कारण है। नोतिकार बहते

स्वच्छन्द यन जाते न शाके नापि पूर्वते ।

अस्य दग्धोदा स्पार्थे कः कुशोत् पातके नरः ॥

जो पेट स्वयं पेटा हाँने बाले यन के शाकादि में भरा जा सकता है, उस पापों पेट के लिये कीन इसा बुद्धिमान जो पाप कर य करावे । हरएक पर्ग के सम्पादकों का भी यही कहना है कि मांस की जहरत नहीं है हम प्राकृतिक भोजन पर बमर कर सकते हैं । हिंदू शास्त्र मनुष्यानि में कहा है कि मांस का खानेवाला, लानिवाला यहिं पकाने याला; पशु को मारने वाला ये मत हुआनि जावेंगे । अगत में दंखा जाये तो पाप ही हिता है और और दया पुण्य है देखा जिसमें है वही मानव है, इन्सान इहम का पुणला है । दयाभाव कहता है कि प्राणियों को कट्ट न दें वर भोजन पाने पर प्रबन्ध कर लो तो अच्छा है ।

इसाई मन की बाइबिल में भी शाकाहार की पुष्टि के बच्चे हैं ।

Romans ch. 14 रोमन्स अध्याय १४ में है "For meat destroy not the work of God All things indeed are pure, but it is evil for that man who eateth with offence 21 It is good neither to eat flesh, nor to drink wine, nor any thing whereby thy brother stumbleth or is offended or is made weak"

भावार्थ—मांस के लिये सुझा के काम को न दियाइ, अप बन्तुएँ यास्तंश में पवित्र हैं जो पाप करके खाता है वह मानव

करता है । येह भला है कि कभी मांस न खाओ शाश्वत न

न ऐसी चीज खाओ जिससे तेरा भाई दुःखी हो या निर्दल

मुसलिम धर्म के कुरान से भी शाकाहार की ही पुष्टि है—

त्रैम्बो नं० (२४) सूरा ८४ : Let man look at his food. It was we who rained down the copious rains and caused the up growth of grain and grapes and healing herbs and the olive and the palm; and enclosed gardens thick with trees and herbage for the service of yourselves and your cattle 20-40

भावार्थ—मानव को अपने भोजन पर ध्यान देना चाहिये । हमने बहुत पानी बरसाया, अनाज, अगूर, अधिषंधिये, खजूर आदि उगवाये, उनके चारों तरफ वृक्षों से, फलों से व घास शाक से, घने भरे हुए याग लगवाये, तुम्हारी और तुम्हारे पशुओं की सेवा के लिए । नं० ४४ सूरा नं० २० में हैं । He hath sent down rains from heaven and by it. We bring forth the kinds of various herbs. Eat ye and feed your cattle. इसने पानी बरसाया है, जिससे हम नाना प्रकार की वनस्पति को पेढ़ा कर सकें । उन्हें तुम जाओ और अपने पशुओं को दिलाओ ।

पारसी धर्म में कहा है—जुनस्तनामा पु० ४४५ में है—

He will not be acceptable to God who shall thus kill any animal. Angel Asfun darmad says “ O holy man, such is the command of God that the face of the earth be kept clean from blood, filth and Carrier, Angle Amardad Says about vegetable.” “It is not right to destroy it uselessly or to remove it without purpose” .

भावार्थ—इस वरह जो कोई पशु को मारेगा उसको परमात्मा स्वीकार नहीं करेगा । पैगम्बर ऐसफ़ायर भद्रने कहा है, ऐ पवित्र

मानव ! परमात्मा की यह आज्ञा है कि पृथ्वी का मुख घंटिर भैल सथा माँस से पवित्र रखना जाय अमरदाद पैगम्बर यमत्पवित्र के लिये कहते हैं कि इसे शूथा नष्ट करना न चाहिये न बृथा हटाना चाहिये ।

यूरोप अमेरिका में ऐसी परीक्षा की गई है कि कुरती गें, याइसिकल की दीड़ में, शिक्षा में शाकाहारी मांसाहारी को जीतते हैं या नहीं, यद्दी प्रमाणित हुआ है कि शाकाहारी वाजी मारले जाते हैं यतिये लोग दिसाव किताव में निपुण होते हैं क्योंकि प्रायः वे मांस नहीं खाते हैं, पश्चिम के प्रबोल डाक्टरों का भी यह मत है । कि शरीर के स्वास्थ्य व हड्डी के लिये मांस की जरूरत नहीं है प्रोफेसर जी सिम्स उड्डेड कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी कहते हैं । meat is absolutely unnecessary for perfectly healthy existence, and the best work can be done on a vegetarian diet.

भावार्थ पूर्ण बन्दुरस्ती का जीवन विनाने के लिये मांस की यिलकुल जरूरत नहीं है केवल शाकाहार पर बसर करने से सबसे अच्छा काम हो सकता है ।

The Toiler and his food by Sir William Earnshaw Coopr C. I. E. पुस्तक में लिखा है कि शक्ति का अंश मांसाहार में घटत कम है ।

बादाम आदि गिरी में	१०० में	६१	अंश शक्ति है
सूखे मटर चने आदि में	„	८७	„
चापल मीठ महित में	„	८७	„
गोहौं के आटे में	„	८६	„
शुद्ध धी में	„	८७	„
सूखे किसमिस अनूरादि में	„	७३	„

मलाई में	१०० में	६९	अंश शक्ति है-
मांस में	"	२८	"
आँडों में	"	२६	"
मछली में	"	१३	"

किसी भी दृष्टि से मांस खाना, मदिरा पीना नशीली घस्तु खाना उचित नहीं है। यदि हम ताजा घना हुआ शुद्ध भोजन करें हम अहुतसे रोगों से बच सकते हैं, वासी भोजन, सङ्ग गला भोजन रोगकारक होता है।

दिग्न्यवर जैन शास्त्रों में शुद्ध भोजन को कथतक खाए कि न खाए इसकी मर्यादा जो बताई है वह बहुत लाभ कारक है मैं २६ वर्ष से शुद्ध भोजन करता हूँ, भोजन सन्दर्भी धीमारी से कभी पीड़ित नहीं हुआ अशुद्ध भोजन करता था तब शरीर में बहुत सी शिकायत रहती थी।

पाठकों के लाभार्थ शुद्ध भोजन की मर्यादा नीचे इस प्रकार बताई जाती है।

दाल, भात, कढ़ी आदि बनने से ६ घंटे के भीतर खाओ पूरी, रोटी, पका हुआ साग, दिनभर खाओ, रात वासी नहीं मिठाई, सुदाल, मठरी, लाहू, पेड़ा वर्फी, बतने से २४ घंटे तक बिना पानी के बनी मिठाई घी व नाज से पिसे हुए आटे के बराबर भारत में पिसा हुआ आटा जाड़े में ७ दिन तक

"	"	गरमी में	५	"
"	"	वर्षा में	३	"

शकर घरकी बनी हुई जाड़े में एक मास गर्मी में १५ दिन वर्षा में ७ दिन। अचार, सुरब्बा, सूखे पापड़, बड़ी, मंगोड़ी २४ घंटे के भीतर। दूध को निकालनेके बाद ४८ मिनट के भीतर छान कर पीले या उसी समय के मध्य में औंटा ले तब २४ घंटे तक,

चीटि दूर्य का तमा हुआ दहो २४ घंटे तक, मञ्चन को छुट्टे मिनट के भीतर गर्म करके घो बनाना चाहिये पहले तप तक चल सकता है जब तक उसका व्याद नहीं बिगड़े हरएक वास्तु को स्थान बिगड़ने पर नहीं बना चाहिये। पानी को द्रानकर ५८ मिनट के भीतर तक बर्ते राद किर छानना चाहियें, लौगांडि से रंग बदलने पर इः घंटे भीतर, गर्म पानी १२ घंटे के भीतर आटा पानी २४ घंटे के भीतर पीना चाहिये। शुद्ध हवा पानी भोजन राने से सधिर शुद्ध यनेगा व वीर्य शुद्ध यनेगा, इसी वीर्य से शरीर में काम करने को शक्ति आती है। बालकों को ऐसा ही शुद्ध भोजन खिलाना व यही शिक्षा देनी चाहिये।

दूसरी आवश्यक घाव कमरत या व्यायाम की शिक्षा है। व्यायाम रातों में लहकों को देशी कमरत, दण्ड बैठक, कुतो आदि भित्तियों व स्थ रक्षार्थ लकड़ी, तलवार आदि शाल बिया भी भिजानो चाहिये। जिस मानव में स्वपर रक्षा का साधन नहीं होगा, वह कायर व टरपोक रहेगा व दुष्टों से अपनी रक्षा नहीं कर सकता। जगत में मध्य ही मानव सज्जन नहीं है दुष्ट भी हैं, बदमाश भी हैं। वे शरत्र प्रद्वार से ही मानते हैं। लहकियां को घर के काम में लगाने से व्यायाम होता है, तो भी उन्हें स्वतंत्रा का साधन सिखाना चाहिये। पानी धरने, बुद्धारी देने, चक्का में आटा पीसने ऊपरली में झूटने व रसोई बनाने से बहुत भा शारीरिक व्यायाम हो जाता है। आज बल स्थियों ने इन कामों को छोड़ दिया है इसी से निवेश गहती है व बलहीन सन्तानों को जन्म देती है। मसोन का पिसा आटा उवना लाभगारक नहीं होता है, जिवना हाथ का पिसा। उसका बहुत थंश जल जाता है, हाथ का पिसा आटा गाने से बहुत सी गरोब यहनों के मज्जी मिल जाती है।

बहुत से ऊँच कुलों के जोग समझते हैं कि कंसरत करना नीच लोगों का व्याम है, हमारा धर्म नहीं है। यह उनको धड़ी भारी भूल है, हम यदि जैन पुराणों को देखें, तो पता चलेगा कि जैनों के पूजनीय महात्मा गार्हस्य जीवन में व्यायाम शिक्षा होते थे। तीन हृष्टान्त यहाँ दिये जाते हैं—

१—जैनों के सनत कुमार चक्रवर्ती बड़े सुन्दर थे। उनके रूपको देखने पक देव आया, तब वह अवादे में व्यायाम कर रहे थे।

२—श्री जम्बू स्वामी कुमार श्री महावीर स्वामी के ६२ वर्ष पीछे, मोहा गये हैं। अरहदास खेठ बणिक के पुत्र थे, इनको शम्भ्र विद्या सिखाई गई थी। राजा श्रेणिक की आज्ञा से यह एक शत्रु को विजय करने जाते हैं और युद्ध करके शत्रु की सेना को संहार करके पीछे लौट आते हैं।

३—श्री गृह्णभद्रेव प्रथम जैन तीर्थ करके पुत्र भरत चक्रवर्ती के समय में काशी के पतिराज। अकम्पन ने अपनी पुत्री सुलोचना के लिए स्वयम्भर रथाया तब भरत का पुत्र अर्ककीति व सेनापति जयकुमार भी और राजपुत्रों के साथ आये थे। सुलोचना ने जयकुमार के गले में घरमाला ढाली, इस पर अर्ककीति रुष्ट हो गये और एक धड़ी सेना के साथ युद्ध करने को तयार हो गये। अकम्पन के पास सेना थोड़ी थी, रात्रि को वे उदास होकर पर्लग पर ज्येटे थे, उनकी पटरानी उदासी का कागण मालूम करती है कि अकम्पन के पास सेना कम है, इसीसे उन से अपनी हार हो जाने यी शंका है, तब वह कहती है कि आपके राज्य में ग्रियं त्रियं भी शब्द विद्या आती है, आप आज्ञा परें, तो मैं सेनापति यन् और घर र पीछे एक स्त्री सिपाही घन जावे, छापमी भेजा त्रियं विक हो जायगी। राजा अकम्पन ने स्त्रीकारता दे दाँ त्रियं की

दीर्घा से राजा अकम्पन की विजय होगई । पुण्यार्थे व साइम
व स्वरसामल प्राप्त करने के लिये सप्त सरद का व्यायाम धालक
धालिकाओं को सिद्धाना चाहिये ।

उव्यायाम करने से खराय हया यादूर निकलती है । शुद्ध हया
भीतर जाती है । उधिर संचार होता है, शरीर संगठित यन जाता
है । शारीरिक उत्तमति की शिला के लिए तीमरी डमरी यदू
है कि मध्यधर्म या धोर्यरहा का उपाय बताया जाते । धालक
धालिकाओं को समझ दिया जावे कि शरीर के अङ्ग प्रत्येकों द्वा
जीवन में क्या उपयोग होता है । २० वर्ष तक पुरुष को व १६
वर्षे तक छी को मध्यधर्म पालकर हद शरीरी बनना चाहिये ।
बसकं पहले काम भागत करना चाहिये । विवाह भी इसी आयु में
करना चाहिये । याल विवाह करके शरीर का नाश न करना
चाहिये न निर्वल सन्तान पेंदा करना चाहिये । बीर्ग हमार शरीर
का राजा है, इसी के प्रताप से हाथ, पैर व इन्द्रियों में यत्न रहता
है । इसका उपयोग सात्र सन्तान प्राप्ति के लिए अपनी विषाहिता
स्था में करना चाहिये । पर छों व बोया में नहीं करना चाहिये ।
जैसे किसान अपने धोज का अपने हो रख में फसल पर येत्यना,
यह मोरियों में व दूसरों के ऐतां में यांभी नहीं वायेगा । योद्धा
भासेन, अज्ञुन, राम, रुद्रमण, इनुमान, धायुषाल, श्री मद्दर्थीर
के वंशज होकर उनके समान वार बनना हो । तो ऊपर लिखित
शारीरिक शिला के नियमों का पालन हर एक को करना चाहिये;
कि धालकों को शिला देना चाहिये ।

वाचिक शक्ति— वचनों की शोलने व्ही अपूर्व शक्ति मानवों
को प्राप्त है । पशुओं में वासीलाप करने की शक्ति नहीं है । इस
शक्ति का काम यही है कि हम अपने मन के भावों को वेदनों के
द्वारा दूसरों को बता सकें । इस शक्ति को शर्िकृत करने के लिए

पहली बात आवश्यक यह है कि जिस भाषा में हमको बात करनी हो, उस भाषा के साहित्य का ठीक ज्ञान होना चाहिये। जिससे उस भाषा में हम कुछ वाक्य बनाकर बोल सकें। योड़े से शब्दों से बहुत सा मतलब दूसरों को बता सकें। दूसरी बात जरूरी यह है कि हम सत्यवादी हों असत्यवादीके बचनों का कोई मूल्य नहीं होता है, क्षृठ बोलने वाले की बात का कोई विश्वास नहीं करता है। बचों को कभी भी भूठ नहीं बोलना चाहिये, क्षृठ बोलने की आदत पड़ जायगी, तब हमारा जीवन विश्वास के लायक नहीं रहेगा। जरा सी भी क्षृठ बोलने पर ऐसा दंड देना चाहिये कि वह बालक भूठ बोलना बड़ा भारी अपराध समझे। तीसरी बात आवश्यक यह है कि हमको भाषण देने का अभ्यास करना चाहिये। जिनको व्याख्यान देने का अभ्यास नहीं होता है। वे अबृत विद्वान होने पर भी अपने मन के भाव दूसरों के गले नहीं उतार सकते हैं। धन्य है वे मानव जो सत्यवादी भीठे भीठे दितकारी बचन बोल कर जगत को सुपथ पर चलने का उपदेश देते हैं।

मानसिक शक्ति—मन की शक्ति को शिक्षित बनाने के लिए पहली बात तो आवश्यक यह है कि जिस विषय में हमको विचार करना हो, उस विषय का हमको पूर्ण ज्ञान जितना मिल सके प्राप्त करना चाहिये। जिससे हम उस विषयमें ठीक २ विचार कर सकें। यदि व्यापारी होना हो तो व्यापार सम्बन्धी ज्ञान, वैद्य होना तो वैद्यक का ज्ञान, इंजीनियर होना हो तो वैसा ज्ञान, विज्ञान का अधिकारी होना हो तो विज्ञान का ज्ञान खूब हासिल करना चाहिये। दूसरी बात जरूरी यह है कि हमको व्यवहार कुशलता आने के लिए नीति शास्त्र का ज्ञान होना चाहिये। द्वितीय चालक नीति औंदि में व फारसी के गुलिशता बोसतां में नीतिकी अच्छा विवेचन है। जैसे नीतिशास्त्र का एक श्रेक है—

अल्लरा रवत् प्राङ्गा मविद्या धनं चार्जयेत् ।
गृहीत इव केशे मृत्युना धर्म माचरेत् ॥

अर्थात्—विद्या व धन को कमावे हुए हमें यह समझना चाहिये कि हम कभी मरेंगे नहीं जबकि धर्म के पालने के लिये यह समझना चाहिये कि मौत मरण के पर थैठी है, मालूम नहीं क्या गला दबा तो । इसलिए धर्म को बराबर करते रहना चाहिये किर कर लेंगे इस तरह टालना न चाहिये ।

तीसरी बात मन को शक्ति धनाने की यह है कि पुस्तकों के ब लेखों के लिखने का अभ्यास करना चाहिये, स्वतन्त्र लेख किसी विषय पर लिखने से विचार शक्ति पढ़ जाती है ।

आत्मिक शक्ति—चौथी आत्मिक शक्ति को उप्रत धनाने की शिक्षा भी याज्ञकों को देना चाहित है जिससे जीवन धर्म रूप व मुख शांति रूप बीते व आत्मा को यज्ञ soul force यह जापे आत्मा ज्ञान स्वरूप है यस ज्ञान याज्ञकों को देना चाहिये ।

ज्ञान आत्मा के बिना नहीं हो सकता है शरीर यह है जब तक आत्मा इस शरीर के भीतर तिष्ठता है तब तक ज्ञान का काम हो सकता है आत्मा के न रहने से ज्ञान का काम विकलुप्त नहीं हो सकता है ।

१०-१२ वर्ष का याज्ञक बंदा है उसको एक फल खाने को दिया जावे, एक फूल सूंपने को दिया जावे, एक बस्तु दिखलाइ जावे और पूछो जावे कि वे चीजें कैसी हैं तब वह यह जवाब देगा कि फल मीठा है, फूल सुगन्धित है, बस्तु लाल रंग की है । फिर किर उससे पूछो जावे कि उसने यह बातें कैसे जानी तथ वह यह जवाब देगा कि मैंने जशान से बदलकर जाना । कि फल मीठा है, नाक से सूंघकर जाना कि फूल सुगन्धित है, आंख से देखकर

जाना कि यह चोर लाल है । फिर उससे पूछो कि तू कहता है कि मैंने जाग्रत्त से, नाक से व आँख से जाना । जबान, नाक व आँख तो जानने के द्वार हैं, पर यह बताओ कि जानने वाला मैं कौन है ? ऐसा पूछने पर वह विचार करेगा कि मैं ही तो जानने वाला हूँ । तब उस वालक को समझा दिया जावे कि तेरे शरीर के भीतर एक जानने वाला है, उसको आत्मा कहते हैं । जब तक वह शरीर में रहता है, तब तक शरीर जिन्हा कहलाता है, जब वह शरीर से निकल जाता है वह शरीर मुर्दा कहलाता है । मुर्दा शरीर में आँख कान, नाक रहते हुए भी जाना नहीं जासकता क्योंकि जानने वाला आत्मा निकल गया । ऐसे कितने ही दृष्टान्तों के देने पर वह समझ जायगा कि मैं आत्मा हूँ व मेरा गुण जानने का है । हर एक आत्मा स्वभाव से परमात्मा है, ज्ञान स्वरूप है, परम शांत है, वह परम आनन्द मय है । अब उसको यह बताना है कि आत्मा का स्वभाव शांत है क्रोध, मान, माया, लोभ नहीं है । एक दरजे में दस वालक पढ़ रहे हैं मास्टर एक लड़के को बिना किसी अपराध के मार दीठगा है, तब वह क्रोध में भर जाता है उसी समय वह मास्टर गणित का एक नया कायदा सिखलाता है सिखलाने के बाद वह सब लड़कों से पूछता है कि तुम इसे समझ गये या नहीं ? सिवाय उस लड़के के जिसे क्रोध आगया था सब कहते हैं हम समझ गये । क्रोधी वालक पूछने पर जवाब नहीं देता है शारदार पूछने पर कहता है कि मास्टर साइब्र आपने बिना कसूर मार दिया, मेरे को क्रोध आगया मैं क्या समझता, तब मास्टर समझा देता है कि मैंने इसी लिये तुमको मारा था कि मुझे आज यह पाठ सिखाना था कि क्रोध हमारे आत्मा का स्वभाव नहीं है जब यह आजाता है तब हम समझ नहीं सकते । देखो जिन लड़कों में क्रोध न था वे सब समझ गए । जो

शांत थे वे समझ गये इससे यह शिक्षा प्रहरण करो कि क्रोध हमारे आत्मा का स्वभाव नहीं है। किंतु शांति भाव आत्मा का स्वभाव है। एक लड़का किसी स्तूल की झास में थैठा था उसको कहीं दावत में जाकर मिठाइयां छानी थी वह छुट्टी भाँगता है छुट्टी नहीं मिलती है, उसी समय मास्टर एक नई धाव समझता है और पूछता है कि तुम सब समझ गये तब सिखाय उस लड़के के जिसका मन मिठाई खाने के लोभ में लगा हुआ था सबने कहा कि हम समझ गए जब उससे पूछा गया तब वह कहता है कि मास्टर साहब मेरा दिल मिठाई में था इससे मैं नहीं समझ बस वह मास्टर समझा देता है कि लोभ आत्मा का देरी है। जिसके भाव में लोभ न था वह समझ गये तुम लोभ के कारण न समझ सके इससे चिक्काम फरो कि लोभ आत्मा का स्वभाव नहीं है किन्तु शांत भाव आत्मा का स्वभाव है। इस तरह किसने ही हृष्टान्तों को देकर बालक के दिल में बिठा देना चाहिए कि आत्मा का स्वभाव कोष, मान, माया व लोभ नहीं है किन्तु परम शांत व बीतराग है। तीसरी बात यह बताने की है कि आत्मा आनन्द मई है। परम सुखी है किसी कोषी बालक का जब क्रोध उत्तर जाय सब उससे पूछा जाय कि क्रोध करते हुए तू दुखी या कि सुखी। तब वह यही जवाब देता है :—
था। अब जब क्रोध ?
कि मैं सुखी हूँ इस
हूँ, लहरा क्रोधादि है वहाँ दुःख है। इस सरह किसने ही हृष्टान्तों को लेकर बालक के दिल पर यह जमा देना चाहिये कि आत्मा हानि मई है, शांत है व आनन्द मई है व यही परमात्मा का स्वभाव है। तू भी स्वभाव से परमात्मा के समान है।

इस शान के होजाने पर उसकी आत्मा जी उन्नति के लिये कामों के करने का अभ्यास करा देना चाहिये।

पहली चाहुरी अभ्यास यह है कि प्रातःकाल व सार्यकाल आत्मिक व्यायाम Spiritual Excercise का अभ्यास कराना चाहिये । उसको पदमासन लगाना सिखाना चाहिये । यह पांच मिनट तक के लिये बेठकर १०८ दफे किसी मंत्र को जप जावे और भीतर विचारे कि मैं अपने आत्मा को या परमात्मा का विचार कर रहा हूँ कि वह ज्ञान स्वरूप है शान्त है व आनन्द मई है मंत्र हो सकते हैं उँ, सोहं, अहेन्, सिद्ध, अंहृत सिद्ध, असि-आवसा या परमात्मन् आदि । इस कसरत से उसके आत्मा को अहृत लाभ पहुँचेगा । यर्थ दो वर्ष के अभ्यास से वह सुख शांति का स्वाद पायेगा, उसका आत्मबल बढ़ जायगा ।

दूसरा अभ्यास यह कराना चाहिये कि बालकों की योग्यता के अनुसार ऐसी कथायें व पाठ पढ़ने को दिये जावें जिनसे आत्मा के गुणों पर श्रद्धा जमै व दुरुणों को धुराई विदित हो । तीसरा अभ्यास यह है कि उनको कुछ भजन सिखलना चाहिए, उसको वे गाया करें । चौथा अध्याम यह है कि उनको ऐसी पूजा का अभ्यास कराया जावे जिससे आत्मा के गुणों में भक्ति का प्रकाश हो ।

इस तरह बालक धालिकाओं का शरीर, वचन व मनकी शक्ति की उन्नति के साथ २ आत्मा की शक्ति भी उन्नत होती जायगी ।

इन चार प्रकार की शिक्षा के लेने पर ही मानव आदर्श मानव घन सकेगा । उसका शरीर पुष्ट होगा, वचन विश्वास युक्त होगा मन सुविचार शील होगा तथा आत्मा शांत व ध्यानिष्ठ होगा जो संकट के समय धरड़ायेगा नहीं यदि शरीर को छोई छेदे भेदे भी तो उसको यह विश्वास होगा कि मेरा घर बिगड़ रहा है । मैं आत्मा हूँ, मुझे कोई छेद भेद नहीं सकता है, मैं अमर अविनाशी हूँ ।

इस तरह शिक्षा प्राप्त मनव आत्मोन्नति भले प्रधार कर सकता है, यदि यह विरक्त हो, साधु जीवन वितावे तो मोक्ष पुण्यार्थकोलक्ष्य में रखता हुआ यह आत्म व्यान व विश्व सेवा का प्रशंसनीय काम करता है जगत को सुमार्ग बताता है, रात दिन परोपकार की य आत्म विचार की मादना रखता है, यदि वह गृहस्थ जीवन विताता है तो मोक्ष पुण्यार्थ का लक्ष्य रखते हुए वह धर्म, अर्थ काम वीन पुण्यार्थों को इस तरह साधन करता है कि एक दूसरे में हानि नहीं आवे, धर्म दत्तना ही पालता है जिससे पैसा कमाने में वे अपने उचित आराम में विघ्न न आवे धर्म की व शरीर स्वास्थ्य की व उचित आराम की रक्षा करता हुआ, वह न्याय से धन कमाता है धर्म व शरीर व धन की रक्षा करता हुआ वह पाँछों इँट्रियों के भोग भोगता है; वह स्वभाव से ही अन्याय के मार्ग से बचता है अपनी विवाहिता स्त्री में सन्तोष रखता है आमदनी के भीतर सर्व करता है; गृहस्थ का कर्तव्य है कि अपनी आमदनी के चार भाग करे एक भाग नित्य के सर्व में लगावे एक भाग विशेष विवाहादि सर्व के लिये रखें एक विभाग जमा करे एक भागदान व परोपकार के लिये निकाले, यदि चौथाई भाग दान धर्म के लिये नहीं निकाल सकता हो तो कम से कम दरार्था भाग तो निकालना ही चाहिये, उस द्रव्य को अद्वार, श्रीपथि, अभय व विद्यादान में सर्व करना चाहिये विघ्ना व अनाथ का व रोगी का पोपण करना चाहिये संकट में उज्जेहे हुये मानव व पशुओं के प्राण वसाना चाहिये, अक्षणियों में ज्ञान का प्रधार करना चाहिये, शिक्षा का विस्तार करना चाहिये।

धर्म के साधन में दो बातें मुख्य हैं उन पर दर एक मानव को व्यान रखना चाहिये, भीतरी सुखसांति पाने के लिये व आत्मवल करना के लिये इन्द्रियों के सुखों की गुलामी की आदत मिटाने के-

लिये व आत्मा को पाप मैल से छुद्धाने के लिये इन चार कामों का अभ्यास रखना चाहिये, कितना भी बड़ा लौकिक धन्दे को करने वाला हो तो भी कुछ समय देना चाहिये ।

(१) सबेरे व सांझ को एकांत में बैठकर आत्म ध्यान करना,
 (२) पवित्र प्रन्थों को रोज पढ़ना, (३) किसी गुरु या विशेष ज्ञानी :से आत्मा की बात सुनना, (४) नित्य शुद्धात्माओं की भक्ति या पूजन करना, जो महानु पुरुष परमात्म पद पर पहुँचे हों उनकी ध्यानाकार मूर्ति के द्वारा उनका स्वरूप विचार कर भक्ति करना ।

इन चार बातों के अभ्यास से हमारा आत्मबल इतना बढ़ जावेगा कि हम उस आत्मबल से लौकिक काम खूब अच्छी तरह कर सकेंगे व कभी असफल ना होगी तो घबड़ाएँगे नहीं धैर्य के साथ मिहनत करेंगे हम दूसरों को सतावेंगे नहीं न्याय पर चल कर जीवन को सुखी घनाएँगे, जब हमें आत्मिक सुख मिलने लगेगा तथ हमारे मन से इँद्रिय भोग के सुख की पराधीनता घट जाएगी, हम इँद्रिय सुख के लिये कभी भी अन्याय से प्रचुर धन न धाहेंगे, न्याय की कर्माई करके सन्तोष पूर्वक विषय भोग से लूप रहेंगे, वास्तव में आत्मबल इँजिन फा काम देगा जिससे सर्व लौकिक काम भले प्रकार हो सकेंगे युद्ध में आत्मबली सिपाही शरीर में धलवान आत्मबल हीन सिपाही को विजय कर लेगा । जो लोग आत्मोन्नति की उरफ लद्य नहीं देते हैं वे अपने जीवन को सुखी घनाने के मार्ग से दूर रहते हैं । धर्म पुरुशार्थ में दूसरी बात आवश्यक यह है कि हम निःस्वार्थ सेवा करना सीखें, अपने दन मन धन धन को दूसरों के कष्ट विचारण में ज्गावें, समाज की सेवा करें । समाज को शिक्षित स्वास्थ्ययुक्त ज्ञानी बनावें, दन में से कुरीतियां हटावें, सरोवरियों का प्रचार करें ।

व्यर्थं व्यय रक्षारे, घन का भनूव्यय परायें। देश की सेवा
देश की परतन्त्रता हटाने में उद्योग करें। व्यदेशी उद्वेग
का प्रचार करें, स्वदेशी असुअओं का व्यवहार बढ़ायें,
शिक्षित बनायें। इस तरह हम परोपकार ए सेवा घर्म
करें। आत्मोन्नति और सेवा घर्म यही घर्म है अंग है—

हमारे सूक्त व कालोज के विद्यार्थियों वो इस तरह सं
धर्म की शिक्षा भी नहीं ही जानी है, जो मुगमता से दी
है। धर्म ज्ञान, पिछोन शिक्षा लंगड़ी शिक्षा है (Lame education)
है। इससे भारत को घटूत हानि पहुँचती है। हम सभा
धर्म की शिक्षा का प्रचार सर्व शिक्षा संस्थाओं में फैर सहते हैं।
कौन हूँ व ऐसे दूसरोंके साथ क्या कठोर्व्य है, यही तो बताते
हैं। मैं आत्मा हूँ शरीर नहीं हूँ। मैं परमज्ञान मई शांत व आनन्द
मई हूँ। इस शिक्षा में निवाय नास्तिक के और किंदी धर्म के
विरोध नहीं है। संवाधमें ये तो सब महसून हैं, अहिंसा धर्म
को कोई धुरा नहीं कह सकता। यदि हम आत्मधर्म व सेवाधर्म
या अहिंसा को सिखाने वाली पुस्तकें धना दें, जो किसी धर्म पर
आलेप रूप न हो व सबकों पसन्द हो, तो आत्मोन्नतिधारव
घायिक शिक्षा का हम भारत में प्रचार कर सकेंगे। आत्मज्ञान
यिना आत्मोन्नति नहीं हो सकती है। आत्मज्ञान यिना नहर्जन
व्यथं सा ही है। ऐसा समझ कर जगत् द्वितीयी परोपकारियों प
चिपत है कि आत्मोन्नति को तरफ हर एक मानव को लगाय
जिससे वह अपना जीवन मुख्यमय Golden Life यना सर्व-

प्रातः

१२

जैन कुतूहल

A KUTOOHALA.

इरिद्वन्द्व

रचित

अहंकृत्यपि जैनशासनरता:,

वनारस

महाकाल हात के द्वायेकाने में छापा गया

१८७३

प्रकाशक के दो शब्द

जैन मित्र मैंडल, धर्मपुरा देहली गत इकोस यर्प से, देहली में स्थापित है और जैन समाज य जैन धर्म की हार प्रकार से मैंडल सेवा कर रहा है। इसका उम्बल कार्य जैनता को भली प्रकार शात है। जैन धर्म का प्रचार करना इसका मुख्य उद्देश्य है मैंडल की तरफ से इम समय तक १०५ टूटे प्रकाशित हो चुके हैं जिनकी प्रकाशित संख्या लगभग तीन लाख के करीब रहने वाली है। टूटे की मांग भारतवर्ष के भिन्नभिन्न देशोंसे आती रहती है। टूटे की समाजोचना जैन अजैन पत्रों में वरावर होती रहती है। अतः प्रार्थना है कि जिन महान् भावों को धर्म से प्रेम है और जैन धर्म को बोध प्राप्त करना चाहते हैं वह स्वयं इसके समासद बनें और अपने मित्रों को समासद बना कर, मैंडल के कार्य कर्त्ताओं की उत्साह अनुप्रायन करें मैंडल ने जैनधर्म प्रचार के लिये "श्री बद्रीदान परिकल लायवरेली" स्थापित कर रखी है। फीस सभा सदी मित्र मैंडल ३। व श्री नर्ह मान गिलां लागारी की २)

। जाते हैं

बहुव ही

बहुरी है उनके लपवाने में धनकी सहायता देनी चाहिये जिसकी सूचि इस टूटे के आवीर में मौजूद है।

धर्म के प्रेमियों से निषेद्ध है कि टूटे कट मंगाकर जैन अजैन जैनता में माझे बांट कर जैन धर्म का प्रचार करें और नविन-

मवदीय—

मन्त्री जैन मित्रमण्डल, धर्मपुरा देहली।

अस्तमोद्धति यह सुद की तरकी

हर एक मनुष्य का फज्ज है कि वह उन्नति के रास्ते पर चले। मानव का जीवन बहुत कीमती है। मानव सबसे बड़ा प्राणी है। तरकी की आखोरी दृढ़ तक यह पहुँच सकता है। इसलिए हर एक मनुष्य का उचित है कि वह अपने जीवन के समय को सफल करें। उसे विलकुल वरचाद न करे। आत्मोन्नति या अपनी तरकी करना। इसका परम कर्तव्य है? इसे आलसी, कायर होकर भाग्य के आधीन नहीं बैठे रहना चाहिये। हमेशा उक्तपार्थी रहकर इम संसार में अपने को ऊपर उठाना चाहिये। आत्मोन्नति के सम्बन्ध में दो अपेक्षाओं से विचार करना है—एक व्यवहार की दृष्टि से दूसरे परमार्थ की दृष्टि से, व्यवहार दृष्टि से हर एक मानव को शारीरिक, धौर्योगिक, समाजिक, राजनीतिक व अन्य उचित लौकिक उन्नति करनी चाहिये। परमार्थ की दृष्टि से उसे अपने आत्मा को पूर्ण, शुद्ध, स्वतन्त्र व परम-सुखी बनाना चाहिये। इन दोनों ही प्रकार की उन्नति के रास्ते पर वही अपने को चला सकता है, जिसमें योग्यता हा, लियाकत हो। इसलिए यह पहले मुनासिव है कि हर एक मनुष्य चाहे खो हो या पुरुष अपने को असली मनुष्य बनावे। जन्म से कोई मनुष्य मनुष्य नहीं बन सकता। मनुष्य में मनुष्य बनने की शक्ति रहती है, जब उस शक्ति को शिक्षा (Education) के द्वारा संत्कारित किया जायगा तब ही मनुष्य, मनुष्य बनेगा।

यिना शिक्षा के शक्तियें प्रकृतित नहीं हो सकती। जैसे माणक व पन्ने की ज्ञान से निकला हुआ सुरखुरा पत्थर (rough stone)

अपने में माणस व पन्ने के रक्त बनने की शक्ति रखता है। परन्तु यह रक्त तब ही पनेगा, जब उसको फाट छाट कर “घिसकर” पालिश करके शुद्ध किया जायगा। यदि साफ नहीं रियां जायगा तो वह पथर के समान बंदाम पड़ा रहेगा, उसकी प्रतिष्ठा नहीं होगी। वह राजा-रानियों के आभूषणों में जड़कर शोभा नहीं पायेगा, इसी तरह हर एक वाज़क व वालिका में चाहे वह किसी भी देश, किसी भी कौम य किसी भी स्थिति का हो, जङ्गली हो या नामस्त्रिक हो, नीच हो या ऊँच हो, पुरुष रत्न व स्त्री रत्न घनने की शक्ति है। शिशा के नंस्कार से हो वे पुरुष रत्न व स्त्री रत्न घन सकते हैं। इसीलिए नोविकारों ने कहा है—“विद्या विहीनः पशु” “विद्या-विहीनाः मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति” यह विद्या के विना मनुष्य पशु है या विद्या विना मनुष्य के भेष में पशु विचर रहे हैं। यह परम पवित्र कर्तव्य है कि देश का हर एक लड़का-लड़की शिक्षित हो जावे। यह पवित्र कर्तव्य माता पिता का है कि वे बालक-बालिकाओं को शिशा देवें। यदि वे शिशा नहीं दे सकते हैं, तो उनको उचित है कि बालक बालिकओं को जन्म ही न देवें, इस शिशा के काम में पूरो २ मद्दद देना समाज के लोगों का वया शासन करने वाली हुदूमत का कर्तव्य है।

शासन कर्ता प्रजा से कर इसी लिए वसूल करते हैं कि वे उस कर से रक्षा के माय २ प्रजा को सुशिक्षित, स्वास्थ्य युक्त हर तरह सुखी बनावे।

सर्व ही सभ्य कहे जाने वाले देशों ने अपनी २ सर्व प्रजा को शिक्षित बना दिया है, प्रिटेन, जर्मन, फ्रांस, डेनमार्क, अमेरिका, जापान, तुर्क व अन्त में रूस को देखिये। रूस ने १० वर्ष में बहुत बल के साथ शिशा का प्रचार कर दिया है। ये हैं विटिश सरकार को भारतवर्ष पर राज करते हुये कराव २०० वर्ष हो चुके

है। परन्तु अभी तक भारत १०० में ६२ ऐसे 'बोनुरूप हैं, जो' अहरों का लिखना-पढ़ना तक नहीं जानते हैं। जहाँ के मनुष्य इतने अधिक पशु तुल्य हॉ, वहाँ पर उन्नति के से हो सकती है। सरकार का पवित्र कर्त्तव्य है कि और मद्दों से खर्च घटाकर शिक्षा के लिए इतना रूपया तो दे, जिससे प्राथमिक शिक्षा (Primary education) को हर एक बालक-बालिका मुक्त व अनिवार्य रूप से (free and compulsory) ले सके। सरकार का खर्च सेना विभाग में व प्रबन्ध विभाग में इतना भारी है कि उसे शिक्षा ऐसे उपयोगी काम के लिए बचत नहीं होती है, जब तक राज्य नीति का ढंग ऐसा न बदले जिससे सेना व रक्षा व प्रबन्ध विभाग में इतना कम खर्च हो कि शिक्षा के लिए दृव्य यथा आवश्यक निल सके, तब तक सरकार से इस आशा की पूर्ति होता असम्भव देखती है। तब क्या हमें शिक्षा प्रचार के लिए कुछ और उद्योग न करना चाहिये ?

हमें अपने पैरों खड़े होकर हर एक बालक-बालिका को कम से कम इतनी शिक्षा ता अवश्य देनी चाहिये, जिससे वह एक भाषा के गद्य या पद्य साहित्य को पढ़कर अपने भावों को सुन्नार सके तथा मामूली दिसाव, किताव, आमद खर्च का रख सके।

भारतीय उत्थान के लिए किसी एक भाषा व लिपि का ज्ञान सभको होना आवश्यक है। हिन्दी भाषा व देवनागरी लिपि अधिक मानवों से व्यवहार की जाती है। इसलिए इस भाषा का ठोक २ ज्ञान तो हर एक को देना चाहिये है, जब प्रजा प्राथमिक शिक्षा में निपुण हो जाय तब उन्नतिकारक विचारों को पगाने वाली पुस्तकें पढ़ने को दी जावें। इसी उपाय से सारी प्रजा के विचार उन्नति के मार्ग पर उत्साहित हो जायेंगे। जिन भारतीय आन्तर्की भाषाओं की मातृ-भाषा हिन्दो 'नहीं है, गुजराती, मराठी, उड़ीया,

बंगला, कनडी, तामील आदि हैं उन प्रान्तों के बालक व बालिकाओं को इन भाषाओं का प्राथमिक शिक्षा के साथ २ हिन्दी भाषा की भी प्राथमिक शिक्षा देना योग्य है, जिससे एक राष्ट्रीयता व एकी भावपना भारत में उत्पन्न हो सके। इस शिक्षा के प्रयत्न के लिए प्रजा को स्वयं खड़े होना चाहिये।

जो पेनशन पाकर व अन्य तरह से अपने काम काज को पुत्रादि को सौंप सकते हैं उनको अपना अन्तिम जीवन का समय परोपकार्य विवाना चाहिये। जिन किसी वेतन के शिक्षा प्रदान का काम करना उचित है। अन्य शिक्षा सम्बन्धी कार्य के लिये यह उचित है कि हरएक जाति वाले अपना द्रव्य विद्याहादि व जन्म मरण के खरचों से बचाकर विद्या प्रचार के कार्य में अपेण करें। सर्व प्रकार के मेले व तमाशों को १० वर्ष के लिए बन्द कर दें। आभूषणों में व कीमती बछों में भी द्रव्य को अधिक न रोकें। सब तरफ से यथा सम्भव द्रव्य को बचाकर शिक्षा प्रचारार्थ अपेण करें। तथा जातियों में ऐसा नियम हो जावे कि अनपढ़ कन्या व पुत्र का विवाह न होगा। इस योजना को काम में लेने से शीघ्र ही भारत में प्रारम्भिक शिक्षा फैल सकती है। लिखना पढ़ना जानना वास्तव में शिक्षा नहीं है। यह शिक्षा लेने का साधन है। शिक्षा कुछ और ही बत्तु है। जिन शक्तियों से एक मानव बना है या जो शक्तियें एक मानव में पाई जाती हैं उन शक्तियों को संस्कारित करके उज्ज्वल करना, उनको महत्वशाली बनाना शिक्षा है।

हरएक मानव चार शक्तियों का समूद है—(१) शारीरिक-शक्ति (Physical Power) (२) वाचिक शक्ति (Speech power) (३) मानसिक शक्ति (Mental power) (४) आत्मिक शक्ति (Spiritual power) हरएक शक्ति एक दूसरे से

अधिक उपयोगी है। शारीरिक शक्ति वह है जिसके आधार से हम जीवित रहकर अन्य शक्तियों का उपयोग ले सकते हैं। शारीर माद्य खलु धर्म साधनं—इसीलिए कहा है कि शरीर की पहले स्वास्थ्य युक्त होने की जरूरत है क्योंकि धर्म कर्म का सब साधन शरीर की बन्दुरुस्ती से हो सकता है। एक बन्दुरुस्ती हजार न्यामर तो भी शरीर शक्ति से जब हम दो चार की रक्षा कर सकते हैं तब वाचिक शक्ति से उपदेश देकर हजारों को सुमारा पर चला सकते हैं इसलिये शारीरिक शक्ति से वाचिक शक्ति का मूल्य अधिक है। मानसिक शक्ति से हम जगत् हितकारी ऐसी सम्मति विचार सकते हैं जिससे जगतमात्र का हित हो सकता है। इससे यह शक्ति वाचिक शक्ति से भी अधिक काम की है। आत्मिक शक्ति की महिमा अपार है। इस शक्ति का फल तीनों शक्तियों के काम में प्रेरक है, इतना ही नहीं इस से आश्चर्य कारक काम किये जा सकते हैं। योग बल से एक योगी हृण मात्र में हजारों मील पहुँच सकता है। जल में धूल के समान चल सकता है। सबसे अधिक बड़िया काम जो आत्मबल से होता है वह यह है कि आत्मा शुद्ध होकर परमात्मा पद में पहुँच सकता है। आत्मबल का निपेद नहीं किया जा सकता। जीवित य शृतक में यही अन्तर है। कि भीवित के शरीर में आत्मा है जबकि मृतक के शरीर में नहीं है। आत्मा की सत्ता बिना शरीर, वचन, मन कुछ काम नहीं कर सकते। ज्ञान शक्ति Consciousness एक ऐसा गुण है जो जड़ में नहीं है, जिसमें वह गुण होता है जिसे ही आत्मा कहते हैं। अतुति जानाति इति आत्मा—जब जड़ बम्बुओं में समझ नहीं है यह बात प्रत्यक्ष प्रगट है तब उन से चेतना शक्ति कभी पैदा नहीं हो सकती है। हमारे सामने कुरसी, टेबुल, कपड़ा कागज पढ़ा है ये जड़ हैं। इनमें समझ नहीं है। यह न्याय शास्त्र

है कि उपादान कारण सदर्शकार्य भवति ॥ जैसा मूल कारण होता है वैसा कार्य होता है। मिट्ठी से मिट्ठी के बर्तन, सुबर्ण से सुबर्ण के आभूपण ही बन सकते हैं। जी के बीज से गेहूँ व गेहूँ के बीज से जौ नहीं पैदा हो सकते हैं। जड़ से चेतन व चेतन से जड़ नहीं बन सकता है। इसलिये आत्म शक्ति को भुलाया नहीं जा सकता, यही हमारी अपनी शक्ति है। तीन शक्तियें जड़ के संयोग से होती हैं ।

यह मानव जड़ चेतन का मिथित पक्ष व्यक्ति (Individual) है इसे उचित है कि हम चारों ही शाकितयों को उन्नति में लाने की शिक्षा, बालक बालिकाओं की देवें। यही सच्ची शिक्षा है। इसी से मनुष्य काम करने लायक सच्चा मनुष्य बनेगा और तब आत्मोन्नति सद्बुद्धि में कर सकेगा। तब तक कोई सिपाही युद्ध कला में तिपुण नहीं किया जाता है तब तक वह युद्ध क्षेत्र में शत्रु का मुश्किला नहीं कर सकता है। शिक्षा देने के लिये क्या क्या उपाय आवश्यक हैं उनको जान लेना जरूरी है—

(१) शारीरिक शिक्षा—शारीरिक शिक्षा के लिये तीन बांधों की शिक्षा की जरूरत है (१) इवा पानी भोजन की शुद्धता (२) व्यायाम या कसरत (३) ब्रह्मचर्य या वीर्य रक्षा ।

इवा वही लेनी चाहिये जो स्वच्छ हो, दुर्गन्ध रहित हो नाक सूंधी चपरासी हमारे पास है उससे पूछना चाहिये। जहाँ की हवा गन्धी हो वहाँ न बेठना न टद्दलना न सोना न कोई काम करना चाहिये। इसलिये चारों तरफ घर में व घाहर सकारई रखनी चाहिये। मलमूत्र थूक कर की गन्ध नहीं फैलनी चाहिये। हमारे भकान ऐसे बनने चाहिये जिनमें कुछ वृक्षों की संगति हो औ वृक्ष इवा को स्वच्छ कर देते हैं। आसाम के मनीपुर में मैं गया हूँ वहाँ हरएक घर में थोड़ा सा वारीचा है व घरों में खियाँ पेसी

सफाई रखती हैं कि कहाँ पर चोई कुड़ा व पानी का गड्ढा नहीं मिलेगा । उनके पर आकाश के समान तिरंक चलकर हैं । बहुत से रोग गन्दी हवा से पैदा हो जाते हैं गंदी हवा से इसी तरह बचना चाहिये जैसे सांप विच्छू के सङ्ग से बचा जाता है ।

‘पानी हमें वही पीना चाहिये, जिसे नाक भी कहे कि यह दुर्गम्य रहित है व जबान भी कहे कि यह भीठा है’ । पानी वही पीना चाहिये, जो कुद्रती (Natural) तीर पर बहता हुआ हो । नदी, कूप, कील, सरोवर का पानी काम में लेना चाहिये । बनावटी पानी, बफ़, सोडा, लेमनड को नहीं पीना चाहिये । जर्मन के डाक्टर लुइकोहनी का मत है, जा उन्होंने (New science of healing) ‘नया इहम शफावस्था, में प्रकट किया है कि (artificial water) बनावटी पानी तन्दुरस्ती को लाभकारी नहीं है । कुद्रती पानी को भी छानकर स्वच्छ करके पीना व बर्तना चाहिये । पानी में बहुत से जन्तु होते हैं, कीड़े होते हैं । मोटे २ दीखते हैं, मढ़ीन दीखने में नहीं आते हैं । दोहरे गाड़े के कपड़े से छानने से बहुत से पानी से बच जाते हैं, उनको हमें उसी जगह में छोने पानी से घोकर पहुंचा देना चाहिये, जहाँ से पानी भी लिया है, उससे उनकी को भी रक्षा होगी, व हमारे शरीर की रक्षा होगी । एक दफे कलकत्ते के आस पास ग्रामों में पेट कूलने की बीमारी फैल गई लोग मरने लगे । तन्दुरस्ती के आफीसर ने जांच करके मालूम किया कि जिन तालाबों का पानी पिया जाता है, उनमें विषयुक्त कीड़े पड़ गये हैं, उसने ग्रामवालों को आशा दी कि पानी को कपड़े से छान छर पीना चाहिए । हिन्दू शास्त्र मनुस्मृति में भी कहा है—वस्त्रं पूर्तं ललं पिवेत् । कि वस्त्र से छान कर जल को पीना चाहिये । बनावटी पानी बफ़ आदि

पीने से पैसा भी खर्च होता है । शरीर को भी हानि होती है । कुद्रती पानी यहता हुआ छान कर पीने से पैसा भी बचता है । शरीर को भी लाभ होता है ।

भोजन हमें वही करना चाहिये जो प्राकृतिक Natural हो जो शरीर की कन्दुरहती के लिये आवश्यक हो, जबान की लोकुपता वश हानिशारक भोजन नहीं प्रदण करना चाहिये । हमें कभी फोई भी मादक पदार्थ या नशा नहीं लेना चाहिये, शराब वो यहुत गन्दी चीज है इस में तो करोड़ों कीड़े मरते हैं व इसका नशा पागल बना देता है इसे तो कभी दूना तक न चाहिये, इसके सिवाय चरस, गांजा, तम्बाकू, भांग की भी कभी नहीं पीना चाहिये । जितने नशे हैं सब शरीर को बिगाड़ते हैं । उत्तेजित करके कमजोर बनाते हैं । लिखा है—

मद्यं मोदयति मनो मोहित चित्तस्तु विस्मरति धर्मं ।

विस्मृत धर्मं जीवो हिंसात्म विद्यांक माचरति ॥

भावार्थ—मादक पदार्थ मन को मोहित कर देता है मोहित चित्त अवश्य धर्म को भूल जाता है धर्म को भूलकर प्रानी यिना भय के हिसा के काम करने लग जाता है मन में बुरे विचार लाता है मुँह से गाती गलीज व अपशब्द बहता है शरीर से कुचेष्टा करने लग जाता है । कभी पुत्रों को भी खोबत व्यवहार करने में अन्या हो जाता है । नशा हमारा पैसा भी नष्ट करता है बोझी सिगरेट पीने वाले ।) व ॥) इसी पूर्ण में प्रति दिन खो देने हैं फल यह होता है कलेज जलता है निर्भलता आती है किसी भी मानव को भूल कर भी नशा न प्रदण करना चाहिये । हमें वही भोजन करना चाहिये जिसको नाक व ज़्यान दोनों पसंद करे जिसमें दुर्गंध न हो व जो स्वभाव से स्वादयुक्त हो, इमारे सामने अनाज फलता है, उच्चों में फल लगते हैं, चेरेंब दृढ़ अम्र व फल पैदा करके

खवर्यं नहीं भोगते हैं यद्यपि हमारी खुराक है हम को इन को साक्षर
करन्दुरुस्त रहना चाहिये, मांस हमारी खुराक नहीं है वह अप्राकृतिक
un natural है एक वच्चे के सामने माँस की ढली डाल दी जावे
व एक फल डाल दिया जावे तो वह वशा फल को चठालेगा—
मांस को नहीं—प्रकृति शाक फलादि अन्न चाहती है मांस
खाने की आदत बना ली जाती है, इन्हें मांस के जाने की विलक्षण
भी उत्तरत नहीं है। मांस से अनेक रोग भी पैदा हो जाते हैं—
हम माता के दूध के समान गाय भैंस के दूध को व दूध से बने धी
दही आदि को भी ला सकते हैं, हमने एक दफे फलकत्ते के एक
बड़े मेडिकल डाक्टर से पूछा कि दुनियां में सबसे बढ़िया मानव
की खुराक क्या हो सकती है तो उसने जवाब दिया कि fresh
pure cow milk ताजा पवित्र गायका दूध इसीलिये हमें उचित है
कि हम गायों को व भैंसों को पालें व उनके वशों को कष्ट न देते हुए
उनसे दूध लेकर वर्तें, जब उक वशे घास खाने लायक न हों
तब उक उनको काफी दूध पी देने वें दमा पूर्वक दूध देने वाले
जानवरों की रक्षा करके हमें उनसे दूध लेना योग्य है। जितने काम
वाले जानवर हैं उनकी खुराक मांस नहीं है दूध व शाक फलादि
है। अपने सामने ऊंट, घोड़े, हाथी, बैल, सज्जर घड़े २ परिश्रम
के काम करते दिखाइ पड़ते हैं ये कोई स्वभाव से मांस नहीं
खाते हैं। आदमी भी काम वाला उन्तु है इसे भी मांस न खाना
चाहिये जब हमको प्रकृति में अन्न फल शाक दूध मिलते हैं तब हम
बूथा क्यों मांस खाकर पशुओं के वध के भागी हों, मांसाहार के
कारण ही कसाई खानों में घड़ी निर्दियता से दूध देने वाले गाय
भैंसादि को व अन्य निरपराध जानवरों को वध किया जाता है।
यदि कोई आंख से देखते तो वह अवश्य मांस खाना छोड़ते हैं।
माँसाहार करना पशुवध का प्रबल कारण है। नीतिकार कहते हैं—

स्वच्छन्द बन जाते न राके नापि पूर्वते ।
 अस्य दग्धोदा स्यारथं कः कुर्योत् पातकं नरः ॥
 जो पेट स्वयं पंद्रा होने वाले बन के राकादि से भरा
 सकता है, उस पापों पेट के लिये कौन ऐसा वृद्धिमान जो पाप
 च करवै। हरएक घर के सम्मापकों का भी यही कहना है फिर म
 की जरूरत नहीं है हम प्राणिक भोजन पर बमर कर सकते हैं
 दिनदूर शास्त्र मनुमृति मे कहा है कि मांस का यानेवाला, लानेवाला
 यल्क पकाने वाला; पशु को मारने वाला ये सब दुर्गति जावेंगे
 जगत मे देखा जाये तो पाप हो हिता है और जीव दया पुरुष
 दया जिसमे है वही मानव है, इन्सान रहम का पुतला है
 दयाभाव कहता है कि प्राणियों को कष्ट न दे रह भोजन पान
 प्रबन्ध कर लो तो अच्छा है।

इसाई मत की बाइबिल मे भी शाश्वादार की पुष्टिके बचन हैं।
 Romans ch. 14 रोमन्स अध्याय १४ मे है “For meat
 destroy not the work of God All things indeed
 are pure, but it is evil for that man who eateth
 with offence 21 It is good neither to eat flesh,
 nor to drink wine, nor any thing whereby thy
 brother stumbleth or is offended or is made
 weak”

भावार्थ—माँस के लिये मुदा के कान को न बिगड़ो, सब
 बस्तुएँ बास्तव मे पवित्र हैं जो पाप करके खाता है वह मानव
 पाप करता है। यह भला है कि कभी मांस न खाओं शराब न
 पीओ न ऐसी चीज खाओ जिससे तेरा भाई दुखी हो या निर्वल
 हो। मुसलिम धर्म के कुरान मे भी शाश्वादार की ही पुष्टि है—

देखो नं० (२४) सूरा न०—Let man look at his food. It was we, who rained down the copious rains and caused the up growth of grain and grapes and healing herbs and the olive and the palm and enclosed gardens thick with trees and herbage for the service of yourselves and your cattle २०-४०

भावार्थ—मानव को अपने भोजन पर ध्यान देना चाहिये। हमने बहुत पानी बरसाया, अनाज, अगूर, औषधिये, सजूर आदि उगवाये, उनके चारों तरफ बृक्षों से, फलों से व धास शाक से, धने भरे हुए ब्राग लगवाये, तुम्हारी और तुम्हारे पशुओं की सेवा के लिए। नं० ४४ सूरा नं० २० मे हैं। He hath sent down rains from heaven and by it. We bring forth the kinds of various herbs. Eat ye and feed your cattle. उसने पानी बरसाया है, जिससे हम जाना प्रकार की बनस्पति को पेदा कर सकें। उन्हें तुम जाओ और अपने पशुओं को खिलाओ।

पारसी धर्म में कहा है—जुनस्तनामा पू० ४४५ में है—

He will not be acceptable to God who shall thus kill any animal. Angel Asfun darmad says " O holy man, such is the command of God that the face of the earth be kept clean from blood, filth and Carrion, Angle Amardad Says about vegetable." "It is not right to destroy it uselessly or to remove it without purpose"

भावार्थ—इस तरह जो कोई पशु को मारेगा उसको परमात्मा स्वीकार नहीं करेगा। पैगम्बर ऐसः कथा ने कहा है, ऐ पवित्र-

भ्रानव ! परमात्मा की यह आकृता है कि पृथ्वी का मुख रधिर मैल तथा माँस से पवित्र रखा जाय अमरदाद पैगम्बर बनस्पति के लिये कहते हैं कि इसे वृथा नष्ट करना न चाहिये न वृथा हटाना चाहिये ।

यूरूप अमेरिका में ऐसी परीक्षा की गई है कि कुरतो में, याइसिकल की दीड़ में, शिक्षा में शाकाहारी मासाहारी को जीतते हैं या नहीं, यही प्रमाणित हुआ है कि शाकाहारी बाजी मारले जाते हैं बनिये लोग हिसाब किताब में निपुण होते हैं क्योंकि प्रायः वे मांस नहीं खाते हैं, पश्चिम के प्रश्नीण डाक्टरों का भी यह मत है । कि शरीर के स्वास्थ्य व दृढ़ता के लिये मांस की जरूरत नहीं है प्रोफेसर जी सिम्स उड्डेड कैम्बूज यूनिवर्सिटी कहते हैं । meat is absolutely unnecessary for perfectly healthy existence, and the best work can be done on a vegetarian diet.

मावार्ध पूर्ण तन्दुरस्तो वा जीवन विगते के लिये मांस की यिलकुल जरूरत नहीं है केवल शाकाशार पर वसर करने से सबसे अच्छा काम हो सकता है ।

The toiler and his food by Sir William Earnshaw Coopr C. J. E. पुस्तक में लिखा है कि शक्ति का अंश मांसाहार में बहुत कम है ।

चार्दाम आदि में	१०० में	६१ अंश शक्ति है
सूखे मटर चने आदि में	”	८७ ”
चावल मांड सहित में	”	८७ ”
गेहूँ के आटे में	”	८६ ”
शुद्ध धो में	”	८७ ”
सूखे किसमिस खजूरादि में	”	५३ ”

मलाई में
मांस में
अंडों में
मछली में

	१०० में	६६	अंश शक्ति है-
"	२८	"	
"	२६	"	
"	१३	"	

किसी भी दृष्टि से मांस खाना, मदिरा पीना नशीली वस्तु खाना उचित नहीं है। यदि हम ताजा घना हुआ शुद्ध भोजन करें हम वहुत से रोगों से बच सकते हैं, वासी भोजन, सदा गला भोजन रोगकारक होता है।

दिगम्बर जैन शास्त्रों में शुद्ध भोजन को कबतक खाए कि न खाए इसकी मर्यादा जो वताई है यह वहुत लाभ कारक है मैं २६ वर्ष से शुद्ध भोजन करता हूँ, भोजन सम्बन्धी वीमारी से कभी पीड़ित नहीं हुआ अशुद्ध भोजन करता था तब शरीर में वहुत सी शिकायत रहती थी।

पाठकों के लाभार्थ शुद्ध भोजन की मर्यादा नीचे इस प्रकार वताई जावी है।

दाल, भात, कड़ी आदि बनने से ६ घंटे के भीतर लाओ पूरी, रोटी, पका हुआ साग, दिनभर लाओ, रात वासी नहीं मिठाई, सुदाल, मटरी, जाड़, पेड़ा वर्फी, बनने से २४ घंटे तक यिन पानी के बनी मिठाई धी व नाज से पिसे हुए आटे के बराबर भारत में पिसा हुआ आटा जाड़ में ७ दिन तक

- " "	गरमी में	५	"
" - "	वर्षा में	३	"

शकर घरकी बनी हुई जाड़ में एक मास गर्मी में १५ दिन वर्षा में ७ दिन। अचार, मुरच्चा, सूखे पापड़, बड़ी, मंगोड़ी २४ घंटे के भीतर। दूध को निकालने के बाद ४८ मिनट के भीतर छान कर पीले या उसी समय के मध्य में औंटा ले तब २४ घंटे तक,

औटि दूष का जमा हुआ दहो २४ घंटे तक, नमखन को ४८ मिनट के भीतर गर्म करके वो यनाना चाहिये वह तब तक चल सकता है जब तक उसका स्वाद नहीं बिगड़े हरएक बस्तु को स्वाद बिगड़ने पर नहीं याना चाहिये। पानो को छानकर ४८ मिनट के भीतर तक यतें शाक फिर छानना चाहिये, लौगादि से रंग बदलने पर इधर थे भीतर, गर्म पानी १२ घंटे के भीतर आटा पानी २४ घंटे के भीतर पीना चाहिये। शुद्ध हवा पानी भोजन खाने से रुधिर शुद्ध बनेगा व वीर्य शुद्ध बनेगा, इसी वीर्य से शरीर में काम करने को शक्ति आती है। यालकों को पेसा ही शुद्ध भोजन खिलाना व यहीं शिक्षा देनी चाहिये।

दूसरे आचरण का कसरत या व्यायाम की शिक्षा है। व्यायामशालाओं में लड़कों को देशो कसरत, दण्ड बेठक, कुरतो आदि भियानो चाहिये व स्वरूप रक्तार्थ लकड़ी, तलबार आदि शाल चिद्या भी सिलानो चाहिये। जिस मानव में स्वपर रक्त का साधन नहीं होगा, वह कायर व ढरपोक रहेगा व दुष्टों से अपनी रक्त भर्नी कर सकता। जगत में सब ही मानव सज्जन नहीं हैं दुष्ट भी हैं, बदमाश भी हैं। वे शस्त्र प्रदार से ही मानते हैं। कड़िहिया को घर के काम में लगाने से व्यायाम होता है, वो भी उन्हें स्वरक्षा का साधन सिखाना चाहिये। पानी भरने, बुहारी रेन, चम्पा में आटा पीसने ऊपरी में कूटने व रसोई बनाने ये बहुत सा शारीरिक व्यायाम हो जाता है। आज कल छियों न इन कामों को छोड़ दिया है इसी से निर्वल रहती है व बलहीन सभ्यानों को जन्म देती है। मसीन का पिसा आटा डतना लाभगरक नहीं होता है, जितना हाथ का पिसा आटा खाने से बहुत अंश जल जाता है, हाथ का पिसा आटा खाने से बहुत सी गरोब बढ़नों की मजूरी मिल जाती है।

बहुत से ऊँच कुलं के लोग समझते हैं कि कसरत करना नीच लोगों का काम है, हमारा धर्म नहीं है। यद्यु उनको घंडी भारी भूल है, हम यदि जैन पुराणों को देखें, तो पता चलेगा कि जैनों के पूजनीय महात्मा गार्हस्य जीवन में व्यायाम शिक्षा लेते थे। तीन दृष्टान्त यहां दिये जाते हैं—

१—जैनों के सनत कुमार चक्रवर्ती बड़े सुन्दर थे। उनके रूपको देखने पक देव आया, तब वह अखाड़े में व्यायाम कर रहे थे।

२—श्री बन्धु स्वामी कुमार श्री महावीर स्वामी के ६२ वर्ष पीछे मोक्ष गये हैं। अरद्दास सेठ वणिक के पुत्र थे, इनकी शक्ति विद्या सिखाई गई थी। राजा श्रेणिक की आज्ञा से यह एक शत्रु को पित्रय फरने जाते हैं और युद्ध बरके शत्रु की सेना को संहार करके पीछे लौट आते हैं।

३—श्री ऋषभदेव प्रथम जैन सीर्ध करके पुत्र भरत चक्रवर्ती के समय में काशी के पतिराजा अकम्पन ने अपनी पुत्री सुलोचना के लिए स्वयम्भर रचाया तब भरत का पुत्र अर्ककीर्ति व संनापति जदकुमार भी और राजपुत्रों के साथ आये थे। सुलोचना ने जदकुमार के गले में वरमाला ढाली, इस पर अर्ककीर्ति रुष्ट हो गये और एक घंडी सेना के साथ युद्ध करने को तय्यार हो गये। अकम्पन के पास सेना थोड़ी थी, रात्रि को वे उदास होकर पर्लंग पर लेटे थे, उनकी पटरानी उदासी का कारण मालूम करती है कि अकम्पन के पास सेना कम है, इसीसे उन हो अपनी हार जाने की शंका है, तब यह कहती है कि आपके गात्र में मित्रय... भी शक्ति विद्या आती है, आप आज्ञा करें, तो मैं सेनापति बन और वर २ पीछे एक स्त्री सिपाही बन जावे, आपकी मैन धिक्क हो जायगी। राजा अकम्पन ने स्वीकारता देवी की

चीरता से राजा अकम्पन को विजय होगई । पुरुषार्थ व साहस्र व स्वरज्ञावल प्राप्त करने के लिये सब तरह का व्यायाम थालक थालिकाओं को सिखाना चाहिये ।

व्यायाम करने से खराब हवा बाहर निकलती है । शुद्ध हवा भीतर जाती है । उपर संचार होता है, शरीर संगठित बन जाता है । शारीरिक उन्नति की शिक्षा के लिए ठीमटी जरूरी बात यह है कि ब्रह्मचर्य या वार्यरज्ञा का उपाय बताया जाए । थालक थालिकाओं को समझा दिया जाये कि शरीर के अङ्ग प्रत्येकों का जीवन में क्या उपयोग होता है । २० वर्ष तक पुरुष को व १५ वर्ष तक स्त्री को ब्रह्मचर्य पालकर दृढ़ शरीरी बनना चाहिये । उसके पहले काम भोगन करना चाहिये । विवाह भी इसी आयु में करना चाहिये । थाल विवाह करके शरीर का नाश न करना चाहिये न निर्वल सन्तान पैदा करना चाहिये । बीर्य हमारे शरीर का राजा है, इसी के प्रताप से हाथ, पैर व इन्द्रियों में बल रहता है । इसका उपयोग मात्र सन्तान प्राप्ति के लिए अपनी विवाहिता स्त्री में बरता चाहिये । पर स्त्री य वैरया में नहीं करना चाहिये । जैसे क्रिसात अपने बीज को अपने हो खेत में फसल पर बोयेगा, वह मारियो में व दूसरों के खेतों में कभी नहीं बोयेगा । यद्य भी मधुमेन, अजुन, राम, लक्ष्मण, हनुमान, बाहुबलि, श्री मद्भावार के वंशज होकर उनके समान बाट बनना हो तो ऊपर लिखित शारीरिक शिक्षा के नियमों का पालन हर एक को करना चाहिये; कि थालकों को शिक्षा देना चाहिये ।

थाचिक शक्ति—वचनों की बोलने की अपूर्व शक्ति मानवों को प्राप्त है । पंचुओं में बातीलाप करने की शक्ति नहीं है । इस शक्ति का काम यही है कि हम अपने मंत्र के भावों को व्यक्तियों के द्वारा दूसरों को बताए सकें । इस शक्ति को शिर्षकृत करने के लिए

पहली बात आवश्यक यह है कि जिस भाषा में हमको बात करनी हो, उस भाषा के साहित्य का ठीक ज्ञान होना चाहिये। जिससे उस भाषा में हम कुछ वाक्य बनाकर बोल सकें। योड़े से शब्दों से बहुत सा मतलब दूसरों को बता सकें। दूसरी बात जहरी यह है कि हम सत्यवादी हों असत्यवादीके बचनों का कोई मूल्य नहीं होता है, जूठ बोलने वाले की बात का कोई विश्वास नहीं करता है। यद्यों को कभी भी भूठ नहीं बोलना चाहिये, जूठ बोलने की आदत पड़ जायगी, तब हमारा जीवन विश्वास के लायक नहीं रहेगा। जरा सी भी जूठ बोलने पर ऐसा दंड देना चाहिये कि वह बालक भूठ बोलना बड़ा भारी अपराध समझे। तीसरी बात आवश्यक यह है कि हमको भाषण देने का अभ्यास करना चाहिये। जिनको व्याख्यान देने का अभ्यास नहीं होता है। वे बहुत विद्रोह होने पर भी अपने मन के भाव दूसरों के गले नहीं उतार सकते हैं। धन्य है वे मानव जो सत्यवादी मीठे मीठे हितकारी बचन बोल कर जगत को सुपथ पर चलने का उपदेश देते हैं।

मानसिक शक्ति—मन की शक्ति को शिक्षित बनाने के लिए पहली बात तो आवश्यक यह है कि जिस विषय में हमको विचार करना हो, उस विषय का हमको पूर्ण ज्ञान जितना मिल सके प्राप्त करना चाहिये। जिससे हम उस विषयमें ठीक २ विचार कर सकें। यदि व्यापारी होना हो तो व्यापार सम्बन्धी ज्ञान, घैरु होना तो वैद्यक का ज्ञान, इंजीनियर होना हो तो वैसा ज्ञान, विज्ञान का अधिकारी होना हो तो विज्ञान का ज्ञान खूब दासिल करना चाहिये। दूसरी बात जहरी यह है कि हमको व्यवहार कुरालंता आने के लिए नीति शास्त्र का ज्ञान होना चाहिये। हिसोपदेश, चाणक्य नीति औंदि में व फारसी के गुलिश्वा बोसतां में नीतिकी अच्छा विवेचन है। जैसे नीतिशास्त्र का एक श्लोक है—

अजरा रवत् प्राज्ञा मविदा धनं चार्वयेत् ।
गृहीत इव केशे मृत्युना धर्मं माचरेत् ॥

अथोत्—विद्या व धन को कमाते हुए हमें यह समझना चाहिये कि हम कभी मरेंगे नहीं जबकि धर्म के पालने के लिये यह समझना चाहिये कि मौत मस्तक पर यैठी है, मालूम नहीं क्या गला दबा ले । इसलिए धर्म को बराबर करते रहना चाहिये किर कर लेंगे इस उरह टाकना न चाहिये ।

तीसरी बात मन को राकि बनाने की यह है कि पुस्तकों के ब लेखों के लिखने का अभ्यास फरना चाहिये, स्वतन्त्र लेख किसी विषय पर लिखने से विचार राकि यह जाती है ।

आत्मिक शक्ति—चौथी आत्मिक शक्ति को उद्घात बनाने की शिक्षा भी बालकों को देना चाहित है जिससे जीवन धर्म रूप व सुख शांति रूप धीते व आत्मा का बल soul force बढ़ जावे आत्मा ज्ञान स्वरूप है यस ज्ञान बालकों को देना चाहिये ।

ज्ञान आत्मा के बिना नहीं हो सकता है शरीर बड़ है जब तक आत्मा इस शारीर के भीतर उपस्थित है तब तक ज्ञान का काम हो सकता है आत्मा के न रहने से ज्ञान का काम विलकृत नहीं हो सकता है ।

१०-१२ वर्ष का बालक बँठा है उसको एक फल खाने को दिया जावे, एक फूल सूंधने को दिया जावे, एक वस्तु दिखलाई जावे और पूछो जावे कि वे चीजे कैसी हैं तब वह यह जवाब देगा कि फल मीठा है, फूल सुगन्धित है, वस्तु लाल रंग की है । फिर किर उससे पूछो जावे कि उसने यह बारें कैसे जानी तब वह यह जवाब देगा कि मैंने ज्ञान से चखकर जाना कि फल सीठा है, नाक से सूंधकर जाना कि फूल सुगन्धित है, आंख से देखकर

जाना कि यह चोर लाल है। फिर उससे पूछो कि तू कहता है कि मैंने जावन से, नाक से व आँख से जाना। जावन, नाक व आँख तो जानने के द्वार हैं, पर यह वराओं कि जानने वाला मैं कौन है? ऐसा पूछने पर वह विचार करेगा कि मैं ही तो जानने वाला हूँ। तब उस वालक को समझा दिया जाये कि तेरे शरीर के भीतर एक जानने वाला है, उसको आत्मा कहते हैं। जब तक वह शरीर में रहता है, तब तक शरीर जिन्हा कहलाता है, जब वह शरीर से निकल जाता है तब शरीर मुद्दा कहलाता है। मुद्दा शरीर में आँख कान, नाक रहते हुए भी जाना नहीं जासकता क्योंकि जानने वाला आत्मा निकल गया। ऐसे कितने ही दृष्टान्तों के देने पर वह समझ जायगा कि मैं आत्मा हूँ व मेरा गुण जानने का है। हर एक आत्मा स्वभाव से परमात्मा है, ज्ञान स्वरूप है, परम शांत है, वह परम आनन्द मय है। अब उसको यह बताना है कि आत्मा का स्वभाव शारीर है क्रोध, मान, माया, लोभ नहीं है। एक दरजे में दस वालक पढ़ रहे हैं मास्टर एक लड़के को बिना किसी अपराध के मार बैठवा है, तथ वह क्रोध में भर जाता है उसी समय वह मास्टर गणित का एक नया कायदा सिखलाता है सिखलाने के बाद वह सब लड़कों से पूछता है कि तुम इसे समझ गये या नहीं? सिवाय उस लड़के के जिसे क्रोध आगया था सब कहते हैं हम समझ गये। कोभी वालक पूछने पर जवाब नहीं देता है बादवार पूछने पर कहता है कि मास्टर साहब आपने धिना कसूर मार दिया, मेरे को क्रोध आगया मैं क्या समझता, तथ मास्टर समझा देवा है कि मैंने इसी लिये तुमको मारा था कि मुझे आज यह पाठ सिखाना या कि क्रोध हमारे आत्मा का स्वभाव नहीं है जब यह आजाता है तब हम समझ नहीं सकते। देखो जिन लड़कों में क्रोध न था वे सब समझ गए। जो

शांत थे वे समझ गये इससे यह शिक्षा प्रदण करो कि क्रोध हमारे आत्मा का स्वभाव नहीं है। किंतु शांति भाव आत्मा का स्वभाव है। एक लड़का किसी स्कूल की लास में बैठा था उसको कहीं दावत में जाकर मिटाइयां खानी थी वह छुट्टी मांगता है छुट्टी नहीं मिलती है, उसी समय मास्टर एक नई बात समझाता है और पूछता है कि तुम सब समझ गये तब सिखाय उस लड़के के जिसका मन मिटाई खाने के लोभ में लगा हुआ था सबने कहा कि हम समझ गए जब उससे पूछा गया तब वह कहता है कि मास्टर साहब मेरा दिल मिटाई में था इससे मैं नहीं समझा यह सब वह मास्टर भमझा देता है कि लोभ आत्मा का बिरी है। जिसके भाव में लोभ न था वह समझ गये तुम लोभ के कारण न समझ सके इससे विश्वास करो कि लोभ आत्मा का स्वभाव नहीं है किन्तु शांत भाव आत्मा का स्वभाव है। इस तरह कितने ही हृष्टान्तों को देकर बालक के दिल में बिटा देना चाहिए कि आत्मा का स्वभाव क्रोध, मान, माया व लोभ नहीं है किन्तु परम शांत व धीतराग है। तीसरी बात यह बताने की है कि आत्मा आनन्द मई है। परम सुखी है किसी क्रोधी बालक का जब क्रोध उत्तर जाय तब उससे पूछा जाय कि क्रोध करते हुए तू दुखी था कि सुखी। तब वह यही जवाब देगा कि क्रोध के समय मैं दुखी था। अब जब क्रोध नहीं है तब सुखी है या दुःखी तो यही बदेगा कि मैं सुखी हूँ इस तरह समझा दो कि जहाँ शांति है वहाँ सुख है, जहाँ क्रोधादि हैं वहाँ दुःख है। इस तरह कितने ही हृष्टान्तों को देकर बालक के दिल पर यह जमा देना चाहिये कि आत्मा ज्ञान मई है, शांत है व आनन्द मई है व यही परमात्मा का स्वभाव है। तू भी स्वभाव से परमात्मा के समान है।

इस ज्ञान के होजाने पर उसकी आत्मा की उन्नति के लिये तीन चार कामों के करने का अभ्यास करा देना चाहिये।

पहली चर्चा अभ्यास यह है कि प्रातःकाल व सायंकाल आत्मिक व्यायाम Spiritual Exercise का अभ्यास कराना चाहिये। उसको पदमासन लगाना सिखाना चाहिये। वह पांच मिनट तक के लिये बैठकर १०८ दफे किसी मंत्र को जप जावे और भीतर विचारे कि मैं अपने आत्मा का या परमात्मा का विचार कर रहा हूँ कि वह ज्ञान स्वरूप है शान्त है व आनन्द मई है मंत्र हो सकते हैं ॐ, सोहं, अहेन्, सिद्ध, अर्हत् सिद्ध, असिद्धा इत्यसा या परमात्मन् आदि। इस कसरत से उसके आत्मा को बहुत लाभ पहुँचेगा। वर्ष दो वर्ष के अभ्यास से वह सुख शांति का स्वाद पायेगा, उसका आत्मवल बढ़ जायगा।

दूसरा अभ्यास यह कराना चाहिये कि बालकों की योग्यता के अनुसार ऐसी कथायें व पाठ पढ़ने को दिये जावें जिनसे आत्मा के गुणों पर श्रद्धा जमै व दुर्गुणों की बुराई विदित हो। तीसरा अभ्यास यह है कि उनको कुछ भजन सिखलना चाहिए, उसको बो गाया करें। चौथा अभ्यास यह है कि उनको ऐसी पूजा का अभ्यास कराया जावे जिससे आत्मा के गुणों में भक्ति का प्रकाश हो।

इस तरह बालक बालिकाओं का शरीर, वचन व मनकी शक्ति की उन्नति के साथ २ आत्मा की शक्ति भी उन्नत होती जायगी।

इन चार प्रकार की शिक्षा के लेने पर ही मानव आदर्श मानव बन सकेगा। उसका शरीर पुष्ट होगा, वचन विश्वास युक्त होगा मन सुविचार शील होगा तथा आत्मा शांत व बलिष्ठ होगा जो संकट के समय घयड़ायेगा नहीं यदि शरीर को कोई छेद भेद भी तौ उसको यह विश्वास होगा कि मेरा पर विगड़ रहा है। मैं आत्मा हूँ मुझे कोई छेद भेद नहीं सकता है मैं अमर अधिनाशी हूँ।

इस तरह शिक्षा प्राप्त मनव आत्मोन्नति भले प्रकार कर सकता है यदि वह विरक्त हो, साधु जीवन वितावे तो मोक्ष पुरुषार्थ को लक्ष्य में रखता हुआ वह आत्म ध्यान व विश्व सेवा का प्रशंसनीय बाहुमत करता है जगत का सुमार्ग बताता है, रात दिन परोपकार की व आत्म विचार की मावना रखता है, यदि वह गृहस्थ जीवन विताता है तो मोक्ष पुरुषार्थ का लक्ष्य रखते हुए वह धर्म, अर्थ काम तीन पुरुषार्थों को इस तरह साधन करता है कि एक दूसरे में हानि नहीं आवे, धर्म उतना ही पालता है जिससे पैसा कमाने में वे अपने उचित आराम में विध्न न आवे धर्म की व शरीर स्वास्थ्य की व उचित आराम की रक्षा करता हुआ, वह न्याय से धन कमाता है धर्म व शरीर व धन की रक्षा करता हुआ वह पाँचों इन्द्रियों के भोग भोगता है; वह स्वभाव से ही अन्याय के मार्ग से बचता है अपनी विवाहिता स्त्री में सन्तोष रखता है आमदनी के भीतर खर्ष करता है; गृहस्थ का कर्तव्य है कि अपनी आमदनी के चार भाग करे एक भाग नित्य के खर्च में लगावे एक भाग विशेष विवाहादि खर्च के लिये रखें एक विभाग जमा करे एक भागदान व परोपकार के लिये निकाल सकता हो तो कम से कम दरावी भाग तो निकालना ही चाहिये, उस द्रव्य को अद्वार, अपीपथि, अभय व विद्यादान में खर्च करना चाहिये विधवा व अनाथ का व रोगी का पोपण करना चाहिये संकट में उत्तमे हुये मानव व पशुओं के प्राण बचाना चाहिये, अज्ञानियों में ज्ञान का प्रचार करना चाहिये, शिक्षा का विस्तार करना चाहिये।

धर्म के साधन में दो धारों मुख्य हैं उन पर दर एक मानव को ध्यान रखना चाहिये, भीतरी मुख्यांति पाने के लिये व आत्मबल बढ़ाने के लिये इन्द्रियों के मुखों की गुलामी की आदत मिटाने के:

लिये व आत्मा का पाप मैल से छुड़ाने के लिये इन चार कामों का अभ्यास रखना चाहिये, कितना भी बड़ा लौकिक धनदे को करने वाला हो तो भी कुछ समय देना चाहिये ।

(१) सबेरे व सांझ को एकांत में बैठकर आत्मध्यान करना, (२) पवित्र प्रन्थों को रोज पढ़ना, (३) किसी गुरु या विशेष शानी :से आत्मा की बात सुनना, (४) नित्य शुद्धात्माओं की भक्ति या पूजन करना, जो महानु पुरुष परमात्म पद पर पहुँचे हों उनकी ध्यानाकार मूर्ति के द्वारा उनका स्वरूप विचार कर भक्ति करना ।

इन चार बातों के अभ्यास से हमारा आत्मबल इतना बढ़ जावेगा कि हम उस आत्मबल से लौकिक काम खूब अच्छी तरह कर सकेंगे व कभी असफल ना होगी तो घबड़ाएँगे नहीं धैर्य के साथ मिहनत करेंगे हम दूसरों को सतावेंगे नहीं न्याय पर चल कर खींचन को सुखी बनाएँगे, जब हमें आत्मिक सुख मिलने जाएगा तब हमारे मन से इँद्रिय भोग के सुख की पराधीनता घट जाएगी, हम इँद्रिय सुख के लिये कभी भी अन्याय से प्रचुर धन न खाएँगे, न्याय की कर्माई करके सन्तोष पूर्वक विषय भोग से नहीं रहेंगे, वास्तव में आत्मबल इँजिन का काम देगा जिससे सर्व लौकिक काम भले प्रकार हो सकेंगे युद्ध में आत्मबली सिपाही शरीर में बलवान आत्मबल हीन सिपाही को विजय कर लेगा । जो लोग आत्मोन्नति की तरफ ज़द्य नहीं देते हैं वे अपने जीवन को सुखी बनाने के मार्ग से दूर रहते हैं । धर्म पुरुषर्थ में दूसरी बात आवश्यक यह है कि हम निःस्वार्य सेवा करना सीखें, अपने तन मन वचन धन को दूसरों के कष्ट विवारण में लगावें, समाज की सेवा करें । समाज को शित्तिव स्वास्थ्ययुक्त झल्ली बनावें, उन में से कुरीतियाँ हटावें, सरोवियों द्वा प्रचार करें ।

अर्थात् व्यय दूर करें, परन्तु वह मदुल्लास बनावें। ऐसा भी है—
देश की परतन्त्रता इटानि में उल्लंग छहे। वहेहो इतनी
व्यय प्रधार करें, वहेहो वाक्यमें वह मदुल्लास बनावें, ऐसा
शिखित बनावें। इस तरह इस प्रोत्तराम वह थंडा धनेवाला
हो। आत्मोप्रति और येरा वह यही पर्यं के अम है—

इमारे गूल व बाजेह के विद्यापितो वह इस लाद मह
पर्यं की शिला भाँ नहीं वाँ बाँ है, वह मुगमला ने तो आ
दे। पर्यं लात, शिलोनशिला लगाऊ शिला दे(Lagai लगाऊ)
है। इससे भारत वा पट्टु रानि पट्टुचलो हैं। इन जा
पर्यं की शिला वा प्रधार सर्व शिला संभालो वे एक मध्ये हैं
जीन हूँ व येरा दूसरोंक जाय वहा इर्हंभर है, यहो नो इद्ध
है। मैं आत्मा हूँ रामीर नहीं हूँ। मैं परमश्वान महं राम व अहं
महं हूँ। इस शिला में जिवाय नामिताठ के और हृषी पर्यं
विरोध नहीं है। संयापमें ने यो सब बहवन है, अहिंसा
यो कोई पुरा नहीं कह सकता। यो इस आवश्यकमें व हेंसा
या अहिंसा वा सियानि याक्षी पुगत करना है, वो शिला पर्यं
आहेव रूप न हो य सबका प्रमद हो, तो आत्मोप्रतिशिला
धारिक शिला यह इस भारत में प्रधार कर सकते। आत्मश्वान
जिना आत्मान्नान नहीं हो सकती है। आत्मश्वान किना नहू
स्थिय सा ही है। ऐसा समझ फर बहव हिंसी प्रोत्तरातियों
बचित है कि आत्मोननति को चरक हर एक मानव को लग
जिससे वह अपना जीवन मुख्यमय Golden Life बना स

- १४ आरजूये स्त्रीरथाद वा० भोलानाथ जी
 १५ जैन कन्देपसन, वा० चम्पतरायजी बैरिस्टर
 १६ जिनेन्द्रभवदंतण प्रथम भाग वा० रातिलप्रसादजी
 १७ वाटडज जैनपम, चम्पतरायजी बैरिस्टर
 १८ जैनघर्मंडी अचमन, वा० नट्प्रभदास जी बैरिस्टर
 १९ लाडगहावीरा, हरिसत्य भट्टाचार्य
 २० लाई महावीर शानू कामरुप्रसाद जी
 २१ जैनघर्मंडी

म.ए.म.

गाढ़ा जी

११ श्रीराज वा० द्योतिप्रसाद देखन्द
 १२ श्रीराज वा० भवदीय
 मन्त्री-जैन मित्र मण्डल
 धरमपुरा देहली।

जैन कुतूहल ।

A KUTOOHALA.

चरित्र

रचित

अहंकारित्यपि लोकशासनरताः

बनारस

भाद्रिकाल दाल के काषेयाने

प्यारे !

तुम तो मेरा मत जानते ही हैं तो इस
पचड़े से तुम्हें क्या यह देखो यह नया
‘तमाशा’ जैन कुतूहल नाम का तुम्हें
दिखाता हूँ तुम्हें मेरी सौगन्ध बाह घाह
अवश्य कहना ।

केवल तुम्हारा
हरिश्चन्द्र

॥ जैन कुतूहल ॥

श्रीहरिश्वन्दू रचित ।

पियारे दूजों को अरहन्त ॥ पूजा जौग मानि
कै जग मैं जाकों पूजैं सन्त ॥ अपुनी अपुनी सूचि
सब गावत पावत कोड नहिं अन्त ॥ हरीचंद
परिनाम तुहीं है तासों नाम अनन्त ॥

जय जय जयति चृष्टभ भगवान् ॥ जगत चृष्टभ
युध्य चृष्टभ धरम के चृष्टभ पुरान प्रमान ॥ प्रग-
टित करन धरम पथ धारत नाना बेस सुजान ॥
हरीचंद कोड भेद न पायो कियो यथा सूचि गान ॥

तुमहि तो पार्ख्वनाथ है प्यारे ॥ तलपन लाँगे
प्रान चगल तै छिनहु होहु जो न्यारे ॥ तुमसों ओर
पास नहिं कोड मानहु करि पतियारे ॥ हरीचंद
खोजत तुमहों को बेद पुरान पुकारे ॥

अहो तुम वहु विधि सुप धरो ॥ जबजब जेसों
काम परे तब तेसो मैख करो ॥ कहुँ ईश्वर कहुँ
बनत अनीश्वर नाम अनेक परो ॥ सत पन्यहि
प्रगटायन कारन लै सहप चिचरो ॥ जैन धरम में
प्रगट कियो तुम दया धर्म सगरो ॥ हरीचंद तुम
कों बिनु पाए लारे लारे जगत मरो ॥

बात कोऽ मूरख की यह मानो ॥ ज्ञायो मारे
तोहूं नाहों जिन मंदिर में ज्ञानो ॥ जग में तेरे
धिना और हे दूजो कोन ठिकानो ॥ जहाँ लखो
तहं रूप तुम्हारो नेनन माँदिं समानो ॥ यक प्रेम
हे यक धि प्रन हे हमरो एकहि बानो ॥ हरीचंद
तव जग में दूजो भाव कहाँ प्रगटानो ॥

नांदि ईश्वरता अंटकी वेद में ॥ तुम तो अ-
गम अनादि अगोचर सो क्षेत्र मत भेद में ॥ तुम्हरी
अमिस अपार अहे गति जाको यार न पारो ॥ ताकों
इति करि गाइ सको क्यों वपुरो वेद विघ्नारो ॥
वेद लिखो ही होय तुम्हारी जोर्य महिमा स्यामी ॥
तो परिमित गुन भण तिहारे नेति नेति के नामी ॥
वेद मारगडि धारो प्यारे जो इस तुम कों पावे ॥
तो जग स्यामी जग चौथन क्यों हुमरो नाम कहावे ॥
जो तुव पद रथ अंजन नेनन लागे तो यह मूझे ॥
हरीचंद बिनु नाय कृपा क्यों यह अभेद गति धूझे ॥

जैन को नास्तिक भावे कोन ॥ परम धरम जो ॥
देया अहिंसा सोई आचरत जोन ॥ सत् कर्मन
को फल नित मानत अति विवेक के भोन ॥ तिन
के मतादि विशद कष्टत जो। महा मूढ हे तोन ॥
सब पहुंचत एक हि थल जाहो करो जोन पथ
गोन ॥ इन आंखिन सों तो सब ही थल मूकत
गोपी रोन ॥ कोन ठाम बहुं प्यारो नाहों भूमि अनल

चल पैन ॥ हरीचंद ए मतवारो तुम रहत न
क्यों गहि मौन ॥

पियारे तुवं गति अगम अपार ॥ यामै खोले
बीह जीन सो मूरख कूरं गंधार ॥ तेरे हित बकनो
यिन वातहिं ठानि अनेकन रार ॥ यासों बँड़ि के
चौर चगत नहिं मूरखता व्यवहार ॥ कहां मन
बुद्धि वेद अहुं जिह्वा कहां महिमा विस्तार ॥
हरीचंद विनु मौन भए नहिं और डणाय विचार ॥

कहां लैं बक्षिहैं वेद विचारे ॥ जिन सों कछु
नातो नहिं तोसों तिन के का पतियारे ॥ कागज
अहर शब्द अर्थ हिय धारण मुख उद्धार ॥ इनसों
बँड़ि जा मैं कछु नाहीं ते पार्थहिं क्या पार ॥
तेरी महिमा अमित इते हैं गिनती को सब वात ॥
हरीचंद वपुरे कहां हैं का यह नाहं मेहिं लखात
युक्ति सों हारि सों का सम्बन्ध ॥ यिना वातहीं
तरक करै क्यों चारहु दृग के अन्ध ॥ युक्तिन को
परमान कहा है ये कबहूं बँड़ि जात ॥ जाको
वात फुरे सो जीतै यामैं कहा लखात ॥ अगम
अगोचर रुपहि मूरख युक्तिन मैं क्यों साने ॥ हरीचंद
कोड़ सुनत न मेरी करत जाईं मन माने ॥

जो पै झगरेन मैं हारि होते ॥ तो फिर श्रम करि
कै उन के मिलिये हित क्यों सब रोते ॥ घर घर
मैं नर नारिन मैं नित उठि कै झगरो होते ॥

सहारे क्यों न हरि प्रगट होत हैं भय यारिधि के
पोत ॥ पशुगत में पश्चिम में निश्चाही कलह होत
है भारी ॥ तो क्यों नहिं सहं प्रगट होत हैं आमुहि
गिरधर धारी ॥ कगड़ेमु मै कछु पूछ लगी है प्रादि
होत का बार ॥ तनिक बात हैं कगरि मरत हैं
जग के फोरि फपार ॥ रे पंडितो करत कगरो क्यों
चुप हैं वेठो भोन ॥ हरीचंद याहो मे मिलहैं
प्पारे राधा रोन ॥

खंडन जग मै काको कीजे ॥ सब मत तो अपने
ही हैं इन को कहा उत्तर दीजे ॥ तासों धाहर होइ
कोऊ जब तब कद्दु भेद घतावे ॥ ह्यांतो पहो सबे
मत ताके तहं टूचो क्यों आये ॥ अपुने हीं पे क्रोधि
बायरे अपुनो काँट छंग ॥ हरीचंद ऐसे मतवारेन
कों कहा कीजे सग ॥

पियोरो ऐये केदल प्रेम मे ॥ नाहि ज्ञान मै
नाहि ध्यान मै नाहिं करम कुल नेम मै ॥ नाहिं
भारत मै नाहिं रामायन नहि मनु मै नाहिं वेद मै ॥
नाहिं फारे मै नाहिं युक्ति मै नाहिं मतन के भेद मै ॥
नाहिं मंदिर मै नाहिं पशा मै नाहिं घंटा को घोर मै ॥
हरीचंद पद बोध्यो खोलत एक प्रीति के खोर मै ॥

धरम सब अटक्यो याहो धीच ॥ अपुनी आप
प्रसंगा करनो दबेन कहनो नोच ॥ यहे बात सघने
सोखो हैं का चैदिक का जेन ॥ अपनो अपनी ओर

खोंचनें यक्ष लैन नहिं दैन ॥ आयह भस्त्रो सबन
के तन मैं तासें तत्व न पावै ॥ हरीचंद उलटो
की पुलटो अपुनी रुचि सों गावै ॥

जै जै पदमाधति महारानी ॥ सब देविन मैं तुमरी
मूरति हम कहं प्रगट लपानी ॥ तुमहिं लच्छमीकाली-
तारा दुरगा शिवा भवानी ॥ हरीचंद हम कों तो
नैनत दूत्री कहुं न दिखानी ॥

कंत है बहुरूपिया हमरो । ठगत फिरत है भेद
बदलि चंग आप रहत है न्यारो ॥ दूढ़ो ज्ञान घतो
ज्ञानिन को स्वांग अनेकन लावै । कथहुं हिन्दू जैन
कथहुं चक्र कचहुं तुरुक बनि आवै ॥ भरमत याके
भेदन मैं सब भूलै धोखा खात । हरीचंद जानत नहिं
एके हौ बहुरूप लखात ॥

लगाओ चस्मा सबै सपेद । तब सब ज्यों को त्यैं
मूर्खेगो जैसो जाको भेद ॥ हरो लाल पीरो अह लीलो
ज्ञा ज्ञा रंग लगायो । सोइ सोइ रंग सबै कछु मूरकत
यासों तत्व न पायो ॥ आयह छोड़ि सबै मिलि यो-
जहु तथ वह स्वप लऐहै । हरीचंद जो भेद भूलि है
सोइ पिय कों पैहै ॥

कहो अद्वैत कहां सों आयो । हमें छोड़ि दूजो है
फो वेहि सब यत पिया लखायो ॥ चिनु वैसो चित
पाएं भूठो यह क्यों जाल घनायो । हरीचंद चिनु परम
प्रेम की यह अभेद नहिं पायो ॥

यह पहिलेहों समझि लियो । हम हिन्दू हिन्दू के
बेटा हिन्दुहि को पयपान कियो ॥ सब तोहि तत्व

मुझि हूँ कहनें पक्षितेहि सो यनि आपु रहै । जनम
करम में हरिहि मानि के योएजे जगतस्य लहै ॥ मेरा
मेरा कहिजे भूले अप्नी हठहि भूलात नहौं । हरी-
चंद जो यह गति है तो फिर यह नहौं दिपाय कहौं ॥

रतनोहौं तो फरज रहौं । हमरे हमरो कहते
यहै जग हमहो हम कहून कहौं ॥ जो हम हम भावै
तो जग में खो दियाहै कोन पहै । हरीचंद यह भेद
मिटावै तबै तत्य त्रिय में उछारै ॥

चहिये इन धातन को प्रेम । कोरो 'हम' सों काम
बले नहि मरो एदा करि नेम ॥ जब जौं मूरति पान
नाथ को आविन में न पमाय । तथ लैं यत्र यन
प्रोतम प्यारो केसे सथहि लयाय ॥ 'यह ब्रह्म'
मूरय भावै ज्ञान गहर यढाय । तनिक चोटके लय
उठन हैं रोर रोर करि द्वाय ॥ जो तुम ब्रह्म चोट
केजि लागो रोर तजौ व्यों प्रान । हरीचंद हांसी नाहौं
है करनो ज्ञान विधान ॥

'यिव्रिहूं' भाषत सबहो लोग । कहां यिष कह
तुम छोट चब के यह केसों संयोग प चरण शंग में
पारवती हूँ यिषहि न काम लगावै । तुम को ते
नारी के देयत शंग मुदगुदी चावै ॥ तुमसों कह
संयंध ब्रह्मसों व्यों हांटत हूँ ज्ञान । हरीचंद मन
मथ आगो तबै पड़ेगो ज्ञान ॥

जो थै सबै ब्रह्महो होय । तो तुम जोह जगनी
मानी एक भावसों दोय ॥ ब्रह्म ब्रह्म कहिं काज न
चरनो वृद्धो मरो व्यों रोय । हरीचंद इन धातन सों
नहि ब्रह्महि पैदो कोय ॥

जो पै दूर बर सांचो जान । तौ क्यों जग को सग-
रे मूरख भूठो करत बखान ॥ जो करता सांचो है तो
सब कारज हूँ है सांच । जो भूठो है दूर बर तो सब
जग हूँ जाना कांच ॥ जो हरि एक अहै तो माया यह
दूबी है कौन । हरीचंद कछु भेद मिल्यान वक्ष्यो
जिय आयो कौन ॥

कहारे इक मत हूँ मतवारे । क्यों दृतनो पाखंड
रचि रहे बिनु पाए पिय प्यारो ॥ कहा समुभ्यौ
सिद्धान्त कहा कियो का परिनाम निकारो । कैसे
मान्या केहि मान्या क्यों कौन उपाय विचारो ॥
सब कीन्हों पै सिद्धु कहा भयो तप करि क्यों तन जारो ।
हरीचन्द जो परम सुलभ पथ तापै कंटक डारो ॥

भये सब मतवारे मतवारे । आपुनो आपुनो मत
लै लै सब भगरत ज्यों भटियारे । कोऊ कछु कहत
ताहि कोऊ दूजो खंडत निज हठधारे ॥ कह भगडे
हो मैं तेहि मान्या पागल भए बिचारे । आपुस मैं
पहिले सब मिलि निश्चै करि होइ न न्यारे ॥ हरीचन्द
आओ तो भाखें जामैं मिलैं पियारे ॥

मत को नाहो अर्थ अहै ॥ तो सब कोई मत मत
कहिकै फिर क्यों कछु कहै ॥ दन बातन मैं जानि
परै नहिं सब कोड कहा लहै ॥ हरीचंद चुप है
सारो जग यामैं क्यों न रहै ॥

नाहि दन भगडन मैं कछुसार ॥ क्यों सरि लरि कै
मरो बाघरे बादन फोरि कपार ॥ कोई पायो कै सुम
हो पेहो सो भासौ निरधार ॥ हरीचंद दन सब भग-
डन सों बाहर है बह यार ॥

चारे ब्यौं पर पर भटकत होलौ ॥ कहा पस्यौ तेहि
कहुं पारहो क्यौं विन धासन छोलौ ॥ क्यौं दन घोयिन
घोयिन लैकी विना धात दो योलौ ॥ हरीचन्द तुप हुई पर
बेठो या मैं ज्ञीभ न योलौ ॥

एरावी देखदु हो भगवान को । कहां कहा भट-
कत होलत हे सुधि न ताहि कहुं प्रान को ॥ तीन
ताग मैं कहुं अंटवयो कहुं घेदन मैं बह डोलै । कहुं
पानी मैं कहुं उपदासन कहुं स्वादा मैं वेलै ॥ कहुं
पद्मरा वनि वनि यैडो कहुं विना सङ्क्षय कहायो । म-
दिर मसजिद गिरजा देहरन होलत धायो धायो ॥ वादन
मैं पोयिन मैं बैठो वचन विषय वनि चाय । हरीचन्द
ऐसे को खोजि कोह घल देहु बताय ॥

लखो हरि तीन ताग मैं लटक्यौ । रीफि रहो
पानी चाटन पैं करम चाह मैं शटक्यौ ॥ हाथ नचा-
बत सो।र मवावत अगिनि कुण्ड दै घटक्यौ । हरीचन्द
हरजार वनिके फिरत लखदु बह भटक्यौ ॥

माया तुममों बड़ी आहै । तुम्हरो केबल नाम यड़ो
है घेद पुटान कहै ॥ बस कहुं नहि तुम्हरो या जग
मैं यह जन साच कहै । नाहों तो हरिचंद तुम्हारो
हुई ब्यौं काम दहै ॥

न जानै तुम कहुं हो की नाहों । झूठहि वेद
परान घकत सब भेद ज्ञान नहिं जांहो ॥ तुम सांचे
हो कै सपना हो कैहो झूठ कहानो । पतित चधारन
दीन जेयाज्ञन यह सब कैसो ज्ञानी ॥ जो सांचे हो
तुम अब सारे येदादिक सब याचे । हरीचन्द तो हमडुं
पतित हुई उधरन सो ब्यौं याचे ॥

अहो यह अति अचरण की धात । जानि दूषिकै
विष के फल कों क्यौं भ्रम्यौ जगधात ॥ सब जानत
मरने है जग में फूठे सुत पितुमात । हरीचंद तो
फिर क्यों नितनित याहों में लपटात ॥

कहां सोहि पोजिए ए राम । मन्दिर वेद पुरान
ज्ञाय जप जप में तो नहिं ठाम ॥ नहं जहं भावत तहं
तहं धावत मिलत न कहुं विसराम ॥ हरीचंद रन सो
कहा बाहर अहै तिहारो धाम ॥

देखें पावत कौन सोहाग । वहुत सोहागिन एक
पिपरवा सबही को अनुराग ॥ खोजत सब पावत नहिं
कोइ धावत करि करि लाग । हरीचंद देखें पहिले
हम काको सागत भाग ॥

इति ।



आत्मांचांते या खदकी तरकी

प्रकाशक-

मन्नी ज्ञन-सिंच-सहृदय
भास्युरा देहली।

भाद्रपद चौर निवारु समवत् २४६३

प्रधमवार १०००] सितम्बर चतु ११३६ [नूत्र]

भाद्रपद चौर निवारु समवत् २४६३

गरमकहुरे तिथप्रणा ताकरखाए
उत्स्पापीवै नवेदै नरं गिरदरे

॥क्रान्तिजामेवोहयागुलावची
होतीवृष्टी की ८५३० वै।